॥ ओ३म् ॥

प्रभु से विनय

मेरे पवित्र भगवान् ! हे देव ! आज तू उस यज्ञ कर्म को महान् बना। हे विधाता ! जिस सुन्दर यज्ञ में आपकी महान् अनुपम कृपा के द्वारा ही हमारा जीवन पनपता है, जिस दया के द्वारा हमारे जीवन का संचालन होता है। आज हम अपने जीवन का संचार चाहते हैं। हे पवित्र बनाने वाले देव ! हमारे नमस्कार को स्वीकार करो जिससे विधाता ! उज्ज्वल यज्ञ कर्मों में हमारे जीवन की जो संलग्नता है वह ऊँची और विलक्षण बनती चली जाए! हे परमात्मन ! हे देव ! हे सखा। तू हमारे जीवन का संचार करने वाला है। हे प्रभु ! जब यज्ञ में अपने जीवन को ले जाते हैं, यज्ञमय जीवन बना देते हैं तो हमारे जीवन की जो स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ हैं उनकी वास्तव में सुगन्धी के साथ-साथ ऊँची तरंगें अन्तरिक्ष में रमण करती हैं। जैसे वाक् से उच्चारण होते ही उसका विस्तार रूप बन जाता है इसी प्रकार यज्ञशाला में एक ब्रह्मा, उद्गाता मनोहर वेदमन्त्रों का पठन-पाठन करता है। वही सुगन्धित सहित शब्दार्थ देवताओं को पवित्र बना देते हैं। आओ ! मेरे भद्र आचार्यजनों ! ऋषि मण्डल ! आज हम सुन्दर यज्ञ करने में संलग्न होते चले जायें।

पूज्यपाद-गुरुदेव

(यज्ञ प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्त्व प्रवचन दिनांक 19 जुलाई 1966)

अंक : 501 समग्र अंक : 576
वर्ष : 42 समग्र वर्ष : 48

अनुक्रम

क्रम संख्या	विषय		पृष्ठ संख्या
1.	प्रभु से विनय	पूज्यपाद-गुरुदेव	1
2.	अनुक्रम		2
3.	दक्षिण-कला	पूज्यपाद-गुरुदेव	3-22
4.	मोक्ष	पूज्यपाद-गुरुदेव	23-36
5.	दान, पुस्तकों की सूची व प्राप्ति के स्थान तथा सूचना आदि		37-40

वैदिक अनुसन्धान समिति के आजीवन सदस्य बनने के लिए शुल्क 800 रु. और वार्षिक सदस्य बनने के लिए शुल्क 100 रु. है जिसको आप समिति के पते के साथ-साथ निम्न किसी एक पते पर भी डाक द्वारा भेजकर सदस्य बन सकते हैं–

1. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, प्रकाशन मंत्री
   ए-59, पंचशील एन्क्लेव, नई दिल्ली-110017, फोन : 011-26498737
2. सुश्री नीरू अबरोल, कोषाध्यक्ष
   K-3, लाजपत नगर,-III, नई दिल्ली-110024 फोन : 011-41721294
3. श्री जितेन्द्र चौधरी, प्रचार मन्त्री
   ए-84, मालवीय नगर, नई दिल्ली-110017, मोबाइल : 9811707343

शृङ्गीऋषि बेवसाईट

Website : www.shringirishi.in
Email : www.contact@shringirishi.in

॥ ओ३म् ॥

दक्षिण-कला

जीते रहो,

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेदमन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेदमन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेदवाणी में उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो परमपिता परमात्मा हमारे अन्तर्हृदयों में विद्यमान रहता है, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का और उसकी अनन्ता के ऊपर सदैव हम सब ही अपने में विचार विनिमय करते रहे हैं। और यह विचार विनिमय करने का जो कर्म है, यह सृष्टि के प्रारम्भ से चला आ रहा है। प्रत्येक मानव अपने में चिन्तन करता रहा है और परमपिता परमात्मा के इस अनूठे जगत को और इस जगत में जो ज्ञान और विज्ञान है, उसके ऊपर प्रायः अन्वेषण करता रहा है। यह क्रियाकलाप परम्परागतों से गान रूपों में गाता रहा है। कहीं अनुदात्त में गाता है, कहीं जटा पाठ में गाता है, तो कहीं धन पाठ में गाने लगता है, कहीं विसर्ग और अनुदात्त में अपने में जब ये रत्त होने लगता है तो यह नाना प्रकार का गान गाने लगता है। हमारे यहाँ एक दिपावली एक रागों में उसी के स्वरूप में मानो देखो मलार राग की अपने में प्राणों का समन्वय करता हुआ गान गाता रहा है। कहीं यह प्राण को उदान में–व्यान में प्रवेश करता हुआ, यह चित्त के मण्डलों का दर्शन करने लगता है। तो बेटा देखो! यह क्रम परम्परागतों से ही मानव एक गतिशील रहा है और गति करता रहा है। तो इसलिए आज का हमारा वेदमन्त्रः यह उद्गीत गाता रहा है, कि श्रवणनाम ब्रह्मा वर्णस्सुत्प प्रवाः लोकाः। कहीं यह मानो लोक-लोकान्तरों का गान

गाने लगता है और एक दूसरे लोक को गणना में लाने का, उसको जानने में लग जाता है।

ज्ञान

इससे पूर्व काल में हमने तुम्हें वर्णन करते हुए कहा था कि जानाम् जन्म ब्रव्हे कर्णम् ब्रव्हाः, क्या यह जो ज्ञान है इसका नाम ही है जानना। प्रत्येक वस्तुओं के गुणों का गुणाधानम् करना और गुणों को धारण करके उसको अपनाने का नाम ज्ञान कहा जाता है। यह जो अग्नि में तेज है और वह स्वयं अपने में तेजवान बनता है, तेजमयी अग्नि को जानने का प्रयास करता है और उसके नाना प्रकार के स्वरूप को जानने के पश्चात् वह ज्ञानी बनता है। मानो जैसे ब्रह्म का बखान करने वाला ब्रह्म का बखान करता हुआ वह आत्मा को उसमें सहयोगी स्वीकार करता है और करता हुआ मुनिवरो! देखो, उस प्राण के अनुकूल क्रिया में रत्त हो करके बेटा! देखो, कहीं प्राण को अपान में, कहीं अपान को व्यान में और कहीं व्यान को समान में प्रवेश करता हुआ, उदान की महिमा का गुणगान गाता है। मेरे प्यारे! देखो भिन्न-भिन्न प्रकार की प्रतिभा में मानव परम्परागतों से ही अपने को ले जाता रहा है और कहीं बेटा! देखो, विज्ञान की विचित्र उड़ाने उड़ता रहता है।

महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज का जीवन

मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ प्रायः अपने में देखो अन्वेषण करते रहते और शब्दों को विचारते रहते और यन्त्रों में चित्रों का दर्शन करते रहते और उनके क्रियाकलाप को भी प्रायः अपने में धारण करते रहे हैं। बेटा! मुझे वह काल जब स्मरण आता रहता है, नाना ऋषिवर उनके समीप जाते और उनसे नाना प्रकार के प्रश्नों को करते और वह उसका उद्गीत गाते और उद्गीत गाना ही केवल वाणी से ही नहीं, वह उद्गीत जब गाते तो क्रियाओं से गाते रहते थे। मानो देखो जैसा भी प्रश्न है, उसी के

अनुरूप मानो देखो यन्त्रों में विज्ञान के माध्यम से या वह मानो देखो वह अपने क्रियाओं के माध्यम से प्रायः वर्णन करते रहे हैं। मेरे प्यारे ! देखो, शिकामकेतु महाराज का जीवन प्रायः स्मरण आता रहा कि उनका जीवन कितना विज्ञान में रहा है और वह एक पक्षीय विज्ञान में रत्त रहे हैं। मानो द्यु में अपने को ले जाना और द्यु से ध्रुवा में प्रवेश करना और ध्रुवा से फिर ऊर्ध्वा में गमन करना। मेरे प्यारे ! यह प्रायः उनका विज्ञान और देखो याग के माध्यम से याग करना और याग में जो तरंगों का प्रादुर्भाव होता रहा उन तरंगों के ऊपर वह विचार-विनिमय करके, उसके विज्ञान की धाराओं को जान करके, तरंगों में तरंगित हो करके नाना प्रकार के यन्त्रों का वह निर्माण करते रहे।

बेटा! देखो, आज मैं विज्ञान के युग में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाहूँगा। केवल यह कि हमारे यहाँ परम्परागतों से ही मानव नाना प्रकार का विचार-विनिमय करता रहा है। सबसे प्रथम मानव की एक ही धारणा रही है, कि हमारा जीवन स्वर्गमय कैसे बने, हमारा गृह कैसे स्वर्गमय बने? राष्ट्र कहता है, राजा भी मेरा राष्ट्र कैसे स्वर्गगामी बने? मेरे प्यारे ! देखो स्वर्ग के लिए प्रत्येक मानव अपने में कामनाबद्ध रहा है और कामना करता रहा है। मेरी प्यारी माताएं यह चाहती हैं, कि मेरा गृह कैसे पवित्र बनेगा और मेरे बाल्य बालिका मानो देखो कैसे महान, एक दूसरे सूत्र में सूत्रित होंगे। तो अभिप्रायः बेटा! देखो स्वर्ग की कामना करते हुए आचार्यों ने अपना-अपना मन्तव्य दिया।

गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहाँ ऋषि मुनियों का आगमन

मुझे वह काल स्मरण है बेटा ! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहाँ बेटा! एक समय कुछ ऋषि मुनियों का समूह उनके द्वार पर पहुँची। जिस समूह में बेटा ! महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलक, महर्षि दालम्य, महर्षि पनपेतु ऋषि महाराज, महर्षि विभाण्डक और महर्षि स्वानवत्री और कहीं मानो देखो ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी रोहिणीकेतु और भी नाना ऋषि जिसमें पोरत्वर ऋषि महाराज, मेरे प्यारे! वर्ण इत्यादि ऋषियों का एक आगमन मानो देखो वह महर्षि

के द्वार पर पहुँची। जब गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ऐसे ऋषित्व अपने में पुरुष कहलाए गये क्या वह मुनिवरों! एक सौ पांच वर्ष तक वह गाड़ी के नीचे अपने जीवन को व्यतीत कर रहे थे। एक सौ पांच वर्ष हो गये थे उन्हें साधना करते रहते। साधना उसे कहा जाता है, जो एक दूसरे के मिलान का अपने में तारतम्य बना लेते हैं। जैसे प्राण को अपान में प्रवेश करना। क्योंकि आचार्य जब मुनिवरों! देखो मुझे स्मरण आता रहा है, जब गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज से यह प्रश्न करते, क्या **महाराज विद्यालय में आचार्य कैसा होना चाहिए?** तो वह यह कहा करते कि वह तपस्वी होना चाहिए। और तपस्या किसे कहते हैं? वह कहते कि प्राण की जिसके द्वारा साधना है मानो जैसे प्राण को अपान में, अपान को व्यान में और व्यान को समान में, समान को उदान में जो प्रवेश करना जानता है वो मानो देखो वह विद्यालय में ब्रह्मचारियों के मस्तिष्कों का अध्ययन करता हुआ, जब विद्यालय को देखो सम्पूर्णता में लाने का प्रयास करता है तो विद्यालय में त्रुटियाँ नहीं आतीं। विद्यालय में ब्रह्मचारी उदण्ड नहीं होते। क्योंकि वह देखो अपने में महान देखो मस्तिष्कों का अध्ययन करने वाले आचार्यजन ही मानो देखो उसका निर्वाचन करते रहे हैं। आज मैं बेटा! इस सम्बन्ध में विचार विनिमय नहीं, परन्तु वेद का ऋषि यह कहता है, क्या विद्यालयों में जब भी आचार्यजन हों मानो वैज्ञानिक, मानो देखो वे प्राण की आभा को जानने वाले हों और देखो प्राणों से ही अपने मन की प्रतिभा से अपने में प्रतिष्ठित हो जाएं। तो ऐसा बेटा! देखो महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज अपना वर्णन करते रहे हैं।

विचार विनिमय क्या मुनिवरों! जब नाना ऋषिवर उनके समीप पहुँचे तो वह विराजमान हो गये। विराजमान हो करके ऋषि ने अब्रहे ऋषि ने उनका बड़ा स्वागत किया और उन्होंने कहा, कहो भगवन् आज मेरा कैसा अहोभाग्य है, जो मानो तुम जैसे महापुरुषों का दर्शन हुआ है। मुनिवरों! देखो सब ऋषि मुनियों ने कहा, प्रभु हमारी उत्कठ इच्छा हुई कि हम महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के दर्शनार्थ मानो उनके आसन पर आयेंगे, क्योंकि दर्शनों से मानव के, इनकी जो

मनोवृत्ति की जो तरंगे हैं, प्राण का जो संचय किया हुआ मानो देखो धन है, जब वह हमारे मनों से, हमारे प्राण से उसका समन्वय होगा, तो मानो तरंगों में तरंगित हो करके हम स्वतः अपने में तरंगवादी बन सकते हैं। तो जब ऋषि मुनियों ने इसी प्रकार उद्गीत गाया, तो मेरे प्यारे ! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा, तो विराजो। वह विराजमान हो गये। प्रत्येक ऋषि की अपनी-अपनी उपदेश मंजरी प्रारम्भ होने लगी।

सोम की विवेचना

मेरे प्यारे! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज से कहा, प्रभु ! हम तो यह जानने के लिए आये हैं कि **यह प्रकाश क्या है?** यह प्रकाश कहीं परम्परागतों से ही मानव अपने में प्रकाश को पुकारता रहता है। परन्तु प्रकाश में वह रत्त भी रहा है, तो उसी प्रकाश के लिए हम सभी उत्सुक बने हुए हैं। मेरे प्यारे! देखो गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने शान्त चित्त और भी कुछ प्रश्न करना चाहते हैं, जितना मैं जानता हूँ, उतना अवश्य तुम्हारे प्रश्न का उत्तर दूँगा। तो मेरे प्यारे! महर्षि प्रवाहण जी ने कहा, हे प्रभु ! देखो यह दक्षिणायन, उत्तरायण क्या है? मेरे प्यारे! इतने में देखो महर्षि सोमकेतु मुनि महाराज उपस्थित हुए और सोमकेतु ने कहा प्रभु मेरा नामोकरण तो देखो व्रेतकेतु था परन्तु मुझे सोमकेतु कहने लगे। सोम इसलिए कि मैंने बारह वर्षों के दो अनुष्ठान किए हैं। मैं सोम को पान करना चाहता हूँ। परन्तु देखो मुझे सोम की आभा प्राप्त होती है। तो मैंने दो अनुष्ठान किए हैं, मैं इस शरीर को सोम मानो प्राण को एकाग्रता में स्वीकार करता हूँ। कहीं सोम मानो देखो मन और प्राण दोनों का समन्वय करना ही उसको मैं सोम कहता रहता हूँ। परन्तु देखो वह सोम की प्रतिभा को अब तक नहीं जान सका हूँ। मेरे प्यारे! देखो गाड़ीवान रेवक ने कहा, कि तुम्हारे आचार्यों ने गुरु ज्ञान में तुम्हें क्या निर्णय दिया है? उन्होंने कहा कि उनका निर्णय तो मानो देखो मेरा निर्णायक नहीं है। उस पर मैं विश्वास तो करता हूँ, परन्तु देखो क्रिया में निर्णायक नहीं होता है। उन्होंने यह कहा है कि यह जो सोम है, यह मानो देखो सूर्य से प्राप्त होता है।

जैसे सूर्य को मानो देखो ऊर्जा प्राप्त होती है, वह द्यौ से प्राप्त होती है और द्यौ से ही मानो देखो वह विद्युत को बिखेर देता है और यह संसार प्रकाशमान होता है। तो वह जो विद्युत है, वह अपने अन्तर्हृदय में जो अन्त शरीरों में जो विद्यमान है, उसको एकत्रित करके उसका ध्यानावस्थित होने का नाम सोम कहा जाता है। परन्तु वह उच्चारण में कुछ है और जब क्रिया में लाता हूँ, तो मुझे कुछ और प्राप्त होता है। तो मेरे प्यारे! देखो इसमें गाड़ीवान ने कहा, क्या ब्रह्मणे वाणस्सुती क्या ब्रह्मचर्यतव को तुम प्राप्त हो जाओ। उन्होंने कहा प्रभु ! यह भी मैंने दृष्टिपात किया है।

परन्तु देखो इतने में जैसे ही वह मौन हुए, इतने में मुनिवरो! देखो महर्षि विभाण्डक ने कहा, हे प्रभु ! मैं सोम को कैसे जानू? उन्होंने कहा देखो ब्रह्मणं वर्णस्सुतम ब्रह्मा चरेसुतम। जब तक ब्रह्मचरिष्यामि नहीं बनोगे, जब तक तुम मानो अपने में सौम्यता को नहीं प्राप्त होंगे। जब तक तुम वर्चोसी नहीं बनोगे, क्योंकि वर्चोसी बन करके जैसे यजमान अपनी यज्ञशाला में देवताओं का जब हुत करता है, तो वह वर्चस्व बनता है और वर्चस्व बनाता वह प्राण और मन के माध्यम से। मन के, प्राण के माध्यम से जब वर्चस्व बनाता है, अपनी देवी से कहता है, हे दिव्या आओ हम वर्चोसी बने। तो वह दोनों जब वर्चस्व बन जाते हैं। जब हुत करते हैं और देवताओं का आह्वान करते हैं, तो उनका याग सफलता को प्राप्त हो जाता है। और वही याग मानो देखो वाह्य जगत को सजातीय बनाता है और वही याग आन्तरिक जगत को सजातीय बना देता है। मेरे प्यारे! देखो गाड़ीवान ने महर्षि विमाण्डक मुनि महाराज के प्रश्नों का मानो यथोचित जब उत्तर दिया तो वह अपने में सन्तुष्ट हो गये।

ऋषि मुनियों का महर्षि शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज के यहाँ गमन

विचार आता रहता है, बेटा! देखो सोम की चर्चाएँ प्रायः देखो हमारे वैदिक साहित्य में हमें प्राप्त होती रही हैं। मेरे प्यारे! देखो सोम की विवेचना करते हुए अपने में सौम्य बनना ही तो एक विचित्रत्व

माना जाता है। परन्तु देखो इसके पश्चात् उन्होंने कहा देखो मैं तो इसको अच्छी प्रकार नहीं जानता हूँ, क्योंकि ऋषि मुनियों में एक ही विशेषता रहती है। जो कि तपा हुआ मार्ग होता है, क्या वह जिन वाक्यों को जिसको नहीं जानते, मानो देखो उसे कहते हैं, कि मैं इसको अच्छी प्रकार नहीं जानता। चलो और ऋषि के द्वार पर गमन करते हैं और वहाँ इसका उत्तर हमें प्राप्त होगा।

गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज और भी नाना ऋषियों का समूह, उन्होने कहा चलो आज हम शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ गमन करते हैं, क्योंकि उद्दालक को एक सौ पांच वर्ष हो गये हैं याग करते-करते और वह याग में मानो देखो विज्ञान की तरंगों में तरंगित हो गये हैं। उनके द्वार पर गमन करेंगे, तो इसका उत्तर भली-भाँति दे सकेंगे। तो मेरे प्यारे! देखो, नाना ऋषियों का एक समूह भ्रमण करते हुए बेटा! देखो उद्दालक गोत्र में पहुँचा और उद्दालक गोत्र के शिकामकेतु उद्दालक मुनि महाराज, उनकी पत्नी रम्भेश्वरी दोनों विद्यमान थे और प्रातः कालीन मानो देखो याग में दोनों परणित थे, याग कर रहे थे। तो वो उच्चारण कर रहे थे, वर्चस्वतम ब्रह्मा वर्चस्सुतम ब्रह्मे वर्ण ब्रह्मा वर्चो स्वाहा। अग्नम ब्रह्मा मृत्युंजम ब्रहो वृति देवाः। मेरे पुत्रों! इस प्रकार वह वेद मन्त्रों का उद्गीत गाते हुए प्रातः कालीन मानो देखो उनके विद्यालय में ब्रह्मचारी विद्यमान हैं और वह रम्भेश्वरी और देखो ऋषिवर अपने में उद्गीत गाते हुए मानो देखो प्रातः कालीन याग कर रहे थे। कामधेनु गऊ के घृत से, गो दुग्ध से जब देखो याग किया जाता है। नाना प्रकार के चरु और साकल्य को मिला करके जब वह याग करते रहे, तो मानो देखो वह अग्नि ब्रह्मण अव्रतम। अग्नि को प्रदीप्त करके अग्नि के हृदय में से जो मानो तरंगों का प्रादुर्भाव होता रहा उन तरंगों को वह जानते हुए, उन्हीं तरंगों के द्वारा बेटा! यन्त्रों का वह प्रायः निर्माण करते रहते थे। नाना प्रकार की तरंगों को ही जानना और जान करके ही, मुनिवरों! देखो उनको क्रियात्मकता में यन्त्रों का निर्माण करते रहे हैं।

आओ मेरे प्यारे! मुझे स्मरण आता रहता है, उनका जीवन बड़ा विचित्र रहा है। तो शिकामकेतु उद्दालक मुनि एक समय अपनी देवी से बोले, हे देवी हम मानो देखो याग तो करते हैं, परन्तु **याग का फल क्या है?** तो उन्होंने कहा कि, यज्ञम् ब्रह्मा क्रतम, मानो देखो उससे यन्त्रों का निर्माण होना चाहिए। बेटा! देखो क्योंकि अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके यह जो शब्द है, यह गमन करता रहता है और यह मानो देखो इस ब्रह्माण्ड की परिक्रमा कर जाता है। और ब्रह्माण्ड एक परमात्मा का बनाया हुआ चरु है और यह बड़ा विचित्रत्व में परणित हो रहा है। तो विचार आता रहता है, कि वह दोनों याग करते और उन तरंगों को, उन तरंगों के ऊपर देखो अपने में नियंत्रण करते हुए अनुसन्धान करने लगे। तो बेटा! मुझे ऐसा स्मरण आता रहता है, तो उन्होंने इस प्रकार के यन्त्रों का निर्माण किया, जिसमें मानो देखो उनमें उनके पूर्वज, उनके पूर्वजों के दर्शन होते रहे और प्रत्येक शब्द अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वह द्यु में प्रवेश होता रहता है और द्यौ से मानो देखो उसको जानता रहता है विज्ञानवेत्ता। तो वैज्ञानिकों ने इस शब्द को जानने का प्रयास किया। शिकामकेतु उद्दालक के यहाँ नाना ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करते रहे। अध्ययन करते हुए मानो रतं ब्रह्मा रत्प प्रव्हे व्रतम, मानो वेदों का उद्गीत गाते हुए वेदमन्त्रों की प्रतिभा में वह प्रतिष्ठित होते हुए और वह मुनिवरों! देखो उन तरंगों को जानकर के यन्त्रों का निर्माण करने की प्रतिभा अथवा वह कला कौशलता उन्हें प्राप्त हो गई। वह नाना यन्त्रों का निर्माण करते रहे हैं। और यन्त्र, मेरे प्यारे! उस यन्त्र में इस प्रकार का जिसमें देखो अपने पूर्वजों के चित्र, उनके क्रियाकलाप, उनके शब्द सब मानो देखो यन्त्र में प्रायः दृष्टिपात होते रहे हैं। और वह मुनिवरों! देखो यन्त्र उनके पिता, महापिता, परपिता, मुनिवरो ! देखो सौवें महापिता तक के यन्त्रों में उन्हें दर्शन होने लगे। जब यह दर्शन होने लगे, तो मुनिवरों! देखो वही अपने में विज्ञान सफलता को प्राप्त होता है, जब विज्ञान में बेटा! अपने पूर्वजों के क्रियाकलाप मानो देखो वह सर्वत्र दृष्टिपात होने लगें। अग्नि की धाराएं कहती हैं कि अग्नि के साथ

प्रावृतिका अग्नि कहलाती है जिस अग्नि के ऊपर शब्द विद्यमान हो करके बेटा! वह द्यौ में प्रवेश कर जाता है और द्यौ से मानो वह लोकों की यात्रा करा देता है। तो ऐसे ही यन्त्रों का उन्होंने निर्माण किया। तो आज बेटा! मैं विज्ञान के युग में तुम्हें नहीं ले जा रहा हूँ।

महर्षि शिकामकेतु मुनि महाराज का सोम पर निर्णयात्मक विचार

केवल विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! इतने में गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के ऋषि मुनियों का जो समूह था वह देखो महर्षि उद्दालक गोत्र में पहुँचा। शिकामकेतु उद्दालक उनकी पत्नी ने बेटा! ऋषियों का अतिथि किया। अतिथि का अभिप्रायः यह है कि जो बिना समय के, बिना तिथि के जो भी अपने गृह में प्रवेश कर जाये, उसका नाम अतिथि कहा जाता है। उन्होंने बेटा! देखो नाना प्रकार के पदार्थों को पान कराया और पान करा करके उन्होंने नत-मस्तिक हो करके कहा, कहो भगवन्, आज मेरा यह कैसा अहोभाग्य है, जो ऋषि मुनियों का आगमन मेरे द्वार पर हुआ। मानो मैं कितना सौभाग्यशाली हूँ। हे प्रभु ! मुझे कुछ क्रियाकलाप उद्गीत गाइये! तो मेरे प्यारे! देखो इतने में गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि हे प्रभु। हम इसलिए तुम्हारे यहाँ आये हैं कि हम सोम को जानना चाहते हैं। ये सोम क्या है? और हम विज्ञान के माध्यम से भी और आध्यात्मिकवाद के स्वरूप में भी जानना चाहते हैं। तो शिकामकेतु उद्दालक ने कहा कि सोम तो परमात्मा को कहते हैं, सोम परमात्मा को कहते हैं जो संसार का रचयिता है, रचने वाला वह सोम है। उन्होंने कहा, दूसरा स्वरूप सोम का यह है, क्या जो मानो हमारे मानव शरीर को क्रिया दे रहा है अथवा क्रियाशील बना रहा है उसका नाम आत्मा है। आत्मा को, देखो पंच महाभूतों के लोको को जानने का नाम ही देखो सोम कहा गया है। वह भी सोम कहलाता है। एक सोम वह कहलाता है, एक साधक अपने में साधना कर रहा है, वह नाना प्रकार की वनस्पतियों को एकत्रित करके और वह उनको अग्नि में तपा करके सोम रस बनाता है और सोम रस का जैसे वह पान करता है, तो मानो उसकी साधना सिद्ध होती चली जाती है। तो मेरे प्यारे! देखो ऋषि ने कहा सोम के

बहुत प्रकार के देखो अभिप्रायः और वाचस्सुति माने जाते हैं। जिस प्रकार वाचम ब्रह्मा व्रतम्, मानो देखो इसके सोमं ब्रह्मा। सोम कहते हैं जहाँ मन और प्राण का दोनों का समन्वय हो जाता है और समन्वय हो करके मानो देखो वर्चस्व परमात्मा का वर्चस्व का जो पान करता है, मानो वही सोम का पान करता है। मेरे प्यारे! देखो जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया, तो वह ब्रह्मचारी और देखो ऋषिजन अपने में मौन हो गये और सन्तुष्ट होते हुए कहा कि प्रभु हम भिन्न-भिन्न प्रकार के सोमों को तो जानना नहीं चाहते हैं। **हम उस सोम को जानना चाहते हैं, जहाँ देखो हमें स्वर्ग की प्राप्ति हो जाए।** उन्होंने कहा स्वर्ग उसे कहते हैं, जहाँ मन प्रसन्न रहने वाला हो। जहाँ मन प्रसन्न रहे, मन वहाँ प्रसन्न रहेगा, जहाँ प्राण स्वस्थ रहेगा और प्राण की क्रिया सुचारु रूप से गमन करती रहेगी, उसे किसी प्रकार का रुग्ण नहीं होगा, तो मानो देखो उसका नाम स्वर्ग कहा जाता है। जहाँ हर प्रकार की प्रसन्नता रहती है, वह **मन, कर्म, वचन में देखो, सबमें प्रसन्नता रहने का नाम स्वर्ग कहा गया है।** उन्होंने कहा कि प्रभु स्वर्ग से भी ऊर्ध्वा मार्ग में कोई मानो क्रियाकलाप है? उन्होंने कहा देखो उसको हमारे यहाँ निष्क्रिया होना, देखो स्वर्ग को जानना और स्वर्ग जिन कारणों से होता है, उसको जान करके जब देखो साधक अग्रणीय बनता है और प्राण के स्वरूप में प्रवेश कर जाता है तो मानो उसको एक विज्ञान की पगडण्डी प्राप्त होती है। लोक-लोकान्तरों में जाने वाले देखो एक मानो मार्ग उसे प्राप्त होते हैं और उसके पश्चात जब उसको भी जान लेता है। परमात्मा के ब्रह्माण्ड में वह इतना तन्मय हो जाता है कि देखो अपने को अपने में और अपने को मानो ब्रह्माण्ड में रत्त करता हुआ, जब ब्रह्माण्ड के लिए एक दूसरे से तारतम्य को जानता हुआ अपने आन्तरिक जगत में समेट लेता है, तो मानो देखो **चित्त में संस्कारों का विलीन हो जाना ही, देखो उनका क्षय होना ही एक देखो साधक को मोक्ष की पगडन्डी प्राप्त होने लगती है।** तो मानो देखो वह विशेष सोम कहा गया, जिसको पाने के पश्चात् मेरे प्यारे! देखो मानव अपने में सौम्य बन जाता है और

वहाँ देखो वह उस पथ को त्याग करके वह आत्मा के क्षेत्र में प्रवेश करके आत्मा अम्ब्रहे परमात्मा के क्षेत्र में प्रवेश करने लगता है।

आओ मेरे प्यारे! देखो जब शिकामकेतु उद्दालक ने इस प्रकार अपना निर्णयात्मक विचार दिया। उन्होंने कहा प्रभु विज्ञान में देखो इसमें क्या विशेषता है? विज्ञान क्या कहता है? उन्होंने कहा यह विज्ञान ही तो है। यह मानो देखो हमारे यहाँ दो प्रकार का विज्ञान परम्परागतों से मानवीय मस्तिष्कों में नृत करता रहा है। एक वह विज्ञान है, जो भौतिक विज्ञान है और दूसरा विज्ञान आध्यात्मिकवाद कहलाता है। जहाँ से देखो यह भौतिक विज्ञान को जानता हुआ, तरंगों को जानता हुआ, मानो देखो नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। देखो, उसमें शब्द को यन्त्रों में लाता है, कहीं तरंगों को तरंगित करता रहता है। कहीं मानो देखो माता के गर्भस्थल में जब शिशु का निर्माण होता है, उसमें जो देवत्व आता है और जो पंच महाभूत अपने में तरंगों में तरंगित करके मानो देखो शिशु को पहले से ही पंच महाभूतों का जो ब्रह्माण्ड है, यह **बाह्रीय जगत** कहलाता है और उसके आन्तरिक जगत में जो तरंगे होती हैं, उसका नाम देखो **आन्तरिक जगत** कहा जाता है। जो मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का वह जगत माना गया है। तो मेरे प्यारे! देखो इस प्रकार जब ऋषि ने अपना मन्तव्य दिया, उन्होंने कहा यह सर्वत्र मानो देखो अपने में अपनेपन को ही जानने का नाम एक **विशिष्ठ जगत** माना गया है।

मेरे प्यारे! देखो इसी प्रकार मानव, कहीं उत्तरायण में स्वर्ग को स्वीकार करता है, कहीं दक्षिणायन में कर रहा है। तो दक्षिणायन के लिए जो जगत है, उत्पत्ति का जो जगत है, वह दक्षिणायन में माना गया है। मेरे प्यारे! देखो जब सूर्य उत्तरायण से दक्षिणायन को गमन करता है तो उत्पत्ति के मूल में तरंगों को छायमान हो जाता है। और जब वह मुनिवरों! देखो दक्षिणायन में जा करके स्थिर हो जाता है उसको मुनिवरो! देखो रजोगुण, तमोगुण की मात्रा प्राप्त हो जाती है। और वही मुनिवरो! देखो जब उत्तरायण में गमन करता है, उत्तरायण में जा करके शान्त हो जाता है, तो बेटा! उसका नाम स्वर्ग कहा जाता

है। वही तो मानो देखो उत्तरायण है। उत्तरायण मानव जानता है और दक्षिणायन नाम ही मुनिवरों! देखो अज्ञान को माना गया है।

उत्तरायण और दक्षिणायन की पितामह भीष्म द्वारा विवेचना

हमारे यहाँ बेटा! देखो तुम्हे स्मरण होगा, क्या मुनिवरों देखो महाभारत की मुझे स्मरण शक्ति आती है तो विचार आता है, बेटा ! देखो जब पितामह भीष्म ने जब मृत्यु शय्या पर अथवा बाणों की शय्या पर विद्यमान हैं। तो विद्यमान हो करके बेटा! देखो वह प्रभु का चिन्तन कर रहे हैं और वह उनसे कहा गया—एक समय द्रोपदी ने कहा कि प्रभु अपने शरीर को नहीं त्याग रहे हो? रक्तपात हो रहा है, आपको कष्ट हो रहा है, आप नारकिक बनते जा रहे हैं। तो उन्होंने कहा मैं नारकिक नहीं हूँ। मैं नारकिक तो यहीं जगत में भोगना चाहता हूँ। परन्तु देखो मैं जब तक अपने शरीर को नहीं त्यागूँगा, अपने आत्मा से पृथक नहीं कर सकता इन पंच महाभूतों को जब तक देखो मेरा जीवन उत्तरायण को न चला जाये, मैं दक्षिणायन में नहीं त्यागूँगा। मेरे प्यारे! देखो, द्रोपदी ने कहा कि हे प्रभु ! आपका दक्षिणायन उत्तरायण का क्या अभिप्रायः है? उन्होंने कहा दक्षिणायन का अभिप्रायः अन्धकार है और देखो उत्तरायण का नाम ही प्रकाश माना गया है। देखो एक माह में दो पक्ष होते हैं, एक शुक्ल पक्ष देखो, एक कृष्ण पक्ष कहा जाता है। वह मानो देखो कृष्ण पक्ष अन्धकार को कहते हैं और उत्तरायण ब्रह्मा वृते को उत्तरायण कहते हैं और देखो शुक्ल को कहते हैं प्रकाश। उसी प्रकार उत्तरायण को प्रकाश कहते हैं। उन्होंने पुनः यह प्रश्न किया कि महाराज उत्तरायण किसे कहते हैं और दक्षिणायन किसे कहते हैं? उन्होंने कहा दक्षिणायन उसे कहते हैं जो अमावस्या से पूर्व देखो पूर्णिमा से लेकर के अमावस तक जो काल व्यतीत होता है, उसको दक्षिणायन कहते हैं। मानो देखो वह दक्षिणायन कहलाता है और जब मानो देखो अमावस से लेकर के जब देखो पूर्णिमा तक का समय व्यतीत होता है चन्द्रमा में उसे उत्तरायण कहते हैं और वही मानो देखो शुक्ल पक्ष माना गया है। इसी प्रकार अम्रतम देखो यह तो लोक की परिभाषा है। इसी प्रकार दक्षिणायन कहते हैं जब सूर्य दक्षिण को गमन

करता है छः माह तक और छः माह तक उत्तरायण में जाता है, तो उत्तरायण का नाम ही देखो यह प्रकाश है और दक्षिणायन का नाम ही हमारे यहाँ देखो अन्धकार जिसमें अमावस की रात्रि होती है।

महर्षि व्यास और पितामह भीष्म का संवाद

मेरे प्यारे! देखो व्यास जी ने यह कहा कि महाराज आप तो ब्रह्मवेत्ता हैं। मैं यह और जानना चाहता हूँ कि उत्तरायण किसे कहते हैं और दक्षिणायन किसे कहते हैं? उन्होंने कहा दक्षिणायन से पितृ यागी बनता है मानव। जब पितृ याग की कामना होती है पति पत्नि में, इच्छा होती है क्या मैं पुत्र याग करूँ, तो पुत्र याग मानो देखो दक्षिणायन कहलाता है और जब मानव की यह इच्छा होती है कि मैं मानो देखो अपने जीवन को प्रकाश में ले जाऊँ, ज्ञान में ले जाऊँ, सतोगुण में ले जाऊँ तो उसका नाम हमारे यहाँ उत्तरायण कहा जाता है। मेरे प्यारे! देखो वह तमोगुण अमृत्तियों में उत्पन्न होता तमोगुण में सन्तान को वो जन्म देता है। परन्तु तमोगुण के गर्भ में भी एक मानो कामना होती है सत्यवाद की और उसमें रजोगुण की पुट लगी हुई होती है, तो वह मेरे प्यारे! देखो उसको दक्षिणायन कहते हैं। उसको ही हमारे यहाँ अन्नम ब्रव्ही क्रतम देवत्वम् भूतम् ब्रहे, वह देवताओं का लोक ही मानो देखो पुत्र याग उसे कहते हैं। और एक मानो देखो देवयान होता है उसको दूसरे रूप में देवयान और पितृयान कहते हैं। पितृयान उसे कहा जाता है जो मेरे प्यारे! देखो ज्ञानी बन करके जैसे आचार्य अपने विद्यालय में ब्रह्मचारियों को शिक्षा देता है और वह कहता है, कि आओ, हे ब्रह्मचारी मेरे समीप आ जाओ, मैं तुम्हें मृत्यु से पार होने के लिए अब तुम्हें मैं उपदेश देना चाहता हूँ। वह मृत्यु से पार होने का उपदेश देते हैं और वह कहते हैं, कि इतना इन्द्रियों में तुम्हारे ज्ञान और विज्ञान समाहित है इसको जानने का नाम ही मृत्यु से पार होना है। जैसे नेत्रों में देखो अग्नि का व्यवधान दृष्टिपात आता है। वह नेत्र मानो देखो अग्नि का स्वरूप बनाना ही ब्रह्मचारियों तुम्हें देखो मृत्यु से पार होना है। श्रोत्रों में शब्दों का व्यवधान हो रहा है, उन शब्दों को अन्तरिक्ष बनाना ही मानो देखो वह तुम्हें उत्तरायण में

जाना है, ज्ञानी बनना है। तो इस प्रकार आचार्य कहता है कि चक्षु में शुन्धामि, प्राणम में शुन्धामि, श्रोत्रों में शुन्धामि, घ्राण में शुन्धामि, सब मानो देखो तुम्हारे जीवन में सुगन्धि उत्पन्न हो जाये। तो इस प्रकार बेटा! जब वह अपना उपदेश देता है, तो आचार्य ब्रह्मचारी दोनों मानो देखो उत्तरायण की चर्चा कर रहे हैं, उत्तरायण में जाना चाहते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो महात्मा भीष्म ने कहा कि हे राघम् भूतम मानो देखो जहासम ब्रहे कृतम मानो देखो मानव का कर्तव्य है कि उत्तरायण में जाने का प्रयास करे। मैं भी अपने को उत्तरायण में शरीर को त्यागना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे देखो! उसके पश्चात् अपना उपदेश मंजरी उनकी प्रारम्भ रही, परन्तु जब यह जान लिया तो उन्होंने पुनः कहा कि प्रभु मैं उत्तरायण और दक्षिणायन को पुनः से जानना चाहता हूँ। उन्होंने कहा देखो जहाँ ज्ञान का क्षय होने लगता है और अज्ञान में देखो संयम से ऊपर चला जाता है, उसका नाम दक्षिणायन कहलाता है और उत्तरायण उसे कहते हैं जो मानो देखो ज्ञान के कुंज के ऊपर जाता है, ज्ञान को जानता हुआ, जानते-जानते वह मानो देखो आत्मा के स्वरूप को जानता हुआ पंच महाभूतों को जानता हुआ मेरे प्यारे! देखो ऋषिराज यह कहते हैं। भीष्म ने कहा कि जैसे विज्ञानवेत्ता हैं, विज्ञानवेत्ता देखो तीन प्रकार के परमाणुओं को ले करके अपने विज्ञान में रत्त होता है—सबसे प्रथम जो मानो परमाणु है, वह गुरुत्व है, तरलत्व है, तेजोमयी है। यह तीन प्रकार के परमाणु हैं और तीन ही प्रकार के परमाणुओं का वह, मानव का संगतिकरण करता रहता है और इसका संगतिकरण करता हुआ मेरे प्यारे! नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करता है। लोक लोकान्तरों की यात्रा में वह सफलता को प्राप्त होता है। वही मानो तीन परमाणु हैं—तेजोमयी, तरलत्व और देखो गुरुत्व इन परमाणुओं को गति देने वाली वायु है और मुनिवरों ! जहाँ वह भ्रमण करता है, गतिवान है उसका नाम अन्तरिक्ष है। यह पंच महाभूत कहा जाता है, पंच महाभूतों का लोक है और इन्हीं में आत्मा विद्यमान रहता है। आत्मा जब मानो देखो उसके संरक्षणता को जान करके बाह्यीय जगत

में मानो प्राण और मन को क्योंकि **यह जो मन है, यह प्रकृति का, पंच महाभूतों का मानो सूक्ष्मत्तम तन्तु कहा जाता है और यह जो प्राण है, यह ब्रह्म के स्वरूप का देखो सूक्ष्म तन्तु कहा जाता है।** जब दोनों का मिलान होना प्रारम्भ हो जाता है, दोनों का जब मिलान होता है, तो आत्मा का क्षेत्र, जिसका भिन्न बन जाता है, ब्रह्म का क्षेत्र भिन्न बन जाता है और भिन्न-भिन्न करके मुनिवरों! देखो अपने में मानो देखो आत्मा के स्वरूप में प्रवेश कर जाता है। पंच महाभूतों के लोक को त्याग करके यह आत्मा जब जाता है तो उत्तरायण में जाता है **वहाँ उत्तरायण कोई दिशा नहीं मानी गई है।** यहाँ केवल ज्ञान और विज्ञान को जानना ही–मेरे प्यारे! देखो जितना ज्ञान विज्ञान है, चाहे वह गुरुत्व में है, चाहे तरलत्व में है। मेरे प्यारे! जितना भी यह ब्रह्माण्ड में पिण्ड बना हुआ है, चाहे वह पिण्ड मुनिवरो ! पृथ्वी मण्डल के रूप में है, चाहे वह चन्द्रमा के पिण्ड के रूप में है, चाहे वह ब्रहस्पति पिण्ड के रूप में है, चाहे वह ध्रुव पिण्ड बना हुआ है। चाहे वह नक्षत्रों के रूपों मे मानो देखो जैसे मूल नक्षत्र है, पुष्प नक्षत्र है, रोहिणीकेतु है, अरुन्धति मण्डल है, जैसे अरुन्धति है, वशिष्ठ मण्डल है। नाना प्रकार के जो मण्डलों का एक पिण्ड बना हुआ है, यह पिण्डों में, सब में गुरुत्व है, तरलत्व है, तेजोमयी है। मानो देखो इन तीनों परमाणुओं को सुगठित करने वाला वह ब्रह्म की सत्ता को जान लेता है। और ब्रह्म की सत्ता ही मुनिवरों! इन नाना प्रकार के पिण्ड को गति दे करके वही बेटा ! आकाश में सौर मण्डलों के रूप में परणित होती रही है। और वही मुनिवरों! आगे चल करके वही आकाश गंगा है और वही आकाश गंगाओं का पिण्ड बन करके नाना आकाश गंगाओं का पिण्ड बन करके वो निहारिका के रूप में है। और वही नाना निहारिका के रूप में मानो देखो वही अमृतम ब्रह्मा वर्णस्सुत्प प्रव्हे, वही मेरे प्यारे! अवनतिका रूप में परणित होती रही है। जो इस प्रकार के विज्ञान को जान करके और इसमें एकोकीकरण करता हुआ ब्रह्म को रचनाकार स्वीकार करता है और वह आत्मा और मानो देखो जानना जानानी जनन्म् ब्रह्मा लोकाम् ब्रह्मे व्रतम। वही ज्ञान के माध्यम से

बेटा! देखो आत्मवेत्ता जब आत्मा का ज्ञान प्राप्त कर लेता है तो वह आत्मा का विज्ञान है। तो मेरे प्यारे! जब आत्मज्ञान हो जाता है। जब यह मानव अपने शरीर को त्यागता है, तो बेटा! पंच महाभूतों को त्याग करके यह बेटा! उत्तरायण को प्राप्त हो जाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो जब व्यास जी इन वाक्यों को पान करने लगे तो अपने में शान्त हो गये। उन्होंने कहा धन्य है प्रभु, आपको।

मेरे प्यारे! उन्होंने कहा हे प्रभु! आप पूर्व से उत्तरायण में क्यों नहीं पहुँचे? उन्होंने कहा मेरा जीवन तो उत्तरायण में था परन्तु देखो मैं अपने में अपने ही वचनों से बंधा हुआ और मैं देखो अपने में अपने को नहीं जान पाया। मानो देखो अब मेरे अर्जुन के तीक्ष्ण बाणों ने मेरा वह दूषित जो मानो रक्त शरीर से देखो दूरी हो गया और मेरे में मानो देखो आत्मा का एक सूक्ष्म शरीर और देखो स्थूल शरीर में प्रतिक्रिया वह पाप की न रहने से जो पाप के अन्न को प्राप्त जो मैंने किया है, उससे मानो मेरा जीवन केवल दक्षिणायन और पाप अमृतिमयों में बना रहा, परन्तु मैं उत्तरायण में नहीं जा सका।

पितामह भीष्म का महारानी द्रोपदी को उपदेश

मेरे प्यारे! देखो यही वाक् उन्होंने महारानी द्रोपदी से कहा था, जब द्रोपदी मेरे प्यारे ! गायत्री छन्दों का पठन-पाठन करती हुई वह उन्हें नित्यप्रति देखो अन्न का पान कराती थी। जब युद्ध समाप्त होने के पश्चात् भी जब वह अन्न का पान कराती। तो उनको देखो उससे वह जो अन्न, पवित्र अन्न था, गायत्री छन्दों से गुथा हुआ अन्न था मुनिवरों! देखो उससे तरंगे पवित्र हो गईं और पवित्र हो करके उससे ब्रह्म का उपदेश देने लगे। और वह उच्चारण करने लगे कि देवी यह जो जगत है, यह ब्रह्माण्ड (ब्रह्म) का रचाया हुआ जगत है और ब्रह्माण्ड देखो ब्रह्म में है और ब्रह्म ब्रह्माण्ड में है। मानो देखो मानव उसकी आभा में रत्त हो रहा है। तो बेटा! देखो इस प्रकार का उपदेश दे रहे थे, तो उस समय महारानी द्रोपदी ने यह कहा कि हे प्रभु क्या जब दुशासन मुझे सभा में लाये और वह मुझे नग्न करने के लिए उन्होंने अपना क्रियाकलाप बनाया। वह तो मेरी संकल्प शक्ति इतनी प्रबल

थी, क्या मेरे चीर का, मेरे वस्त्रों का हनन नहीं कर सके परन्तु मेरी संकल्प शक्ति की तरंगों ने उन्हें देखो शांत कर दिया था। हे प्रभु! उस समय तुम्हारा यह ब्रह्म ज्ञान कहाँ गया था? तो उस समय उन्होंने कहा देवी मैंने, हे पुत्री ! मैंने दुर्योधन के देखो पाप का अन्न जो मैंने ग्रहण किया था उससे मेरे विचार दक्षिणायन बने हुए थे। मेरा उत्तरायण नहीं रहा था परन्तु उत्तरायण उससे (पाप के अन्न से) मेरा दमन हो गया था। अब तुम्हारे पवित्र अन्न ने मेरे अन्न को, जो मैं पाता रहता हूँ उस पवित्र अन्न ने मेरे जीवन को उत्तरायण में पहुँचा दिया है। अब मैं उत्तरायण में देखो ब्रह्म है और दक्षिणायन में प्रकृति है। प्रकृतिवाद में जाने के पश्चात् मानव प्रकृति का बन जाता है। और जब वह उत्तरायण में, अन्न की पवित्रता के द्वारा जब वह उत्तरायण में चला जाता है, तो उसका मन, मस्तिष्क और आत्मा सब ब्रह्म की एक धरोहर बन करके उसको वह भोगतव्यवाद एक स्वामीत्व बनता है। तो हे देवी देखो मेरे जीवन में, मेरा जीवन देखो उत्तरायण और दक्षिणायन में प्रवेश नहीं मानो मैं उत्तरायण में अपने शरीर को त्यागूँगा। तुम्हें यह स्मरण (भान) हो जाना चाहिए और जो भी मानव उत्तरायण में जाने के पश्चात अपने शरीर को त्यागता है, वह मानव देखो मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करता है। या लोक-लोकान्तरों की प्रतिभा को जान करके वह पुनः मानो देखो आध्यात्मिकवादियों के गृह में जन्म ले करके, गृह स्वामी बन करके मानो पुनः से पंच महाभूतों के लोक में आत्मा का विस्तार होता है। तो मेरे पुत्रों! देखो यह पितामह भीष्म का एक वाक् था। उन्होंने कहा है कि परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान का नाम ही उत्तरायण है और देखो प्रकृतिवाद में प्रवेश होने का नाम ही वह तमोगुण है और वही दक्षिणायन कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो उन्होंने अन्त में कहा कि जो दक्षिणायन में हैं वह पितृ यागी बनते हैं और जो उत्तरायण में हैं वे देवयागी बनते हैं, वह देवता को प्राप्त होते हैं। इसलिए देवतम् ही हमारा जीवन है। तो मेरे पुत्रों ! देखो इस प्रकार ऋषि ने अमृतम ब्रह्मा देखो भीष्म जी ने अपने वाक् प्रगट किए। वह वास्तव में देखो अपनी आभा में परणित होते हुए–।

मेरे प्यारे! देखो आज का हमारा वेदमन्त्रः ये क्या कह रहा है? **वेदमन्त्र यही तो कहता है कि हमें बेटा! अपने जीवन को, मानो देखो अपने क्रियाकलापों को इतना विचित्र बना लेना चाहिए जिससे संसार में स्वर्ग ही स्वर्ग दृष्टिपात आने लगे।** परमात्मा का जो जगत है, बेटा! यह बड़ा अनुपम है और वह अनन्तमयी है और मानव उसके जगत में नाना प्रकार का गान गाता है। कहीं बेटा! यह मल्हार राग गाता है, कहीं मानो यह मुनिवरों! दीपावली के राग को परणित करने लगता है। मुझे स्मरण है क्या ऋषिजन जब देखो प्राण और अपान को मानो देखो एक दूसरे में ला करके गान गाते थे तो बेटा! देखो दीपों का प्रकाश हो जाता था। और जब मुनिवरों! देखो यह प्राण को शीतली प्राणायाम में प्रवेश करके संकल्पोमयी प्राणायाम करते थे बेटा! जब अपने को गान गाता है तो बेटा ! देखो मेघों से वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। तो परिणाम क्या है? कि ये नाना प्रकार के गान को गाना चाहता है। क्रियाकलापों का तो मानो देखो क्षय नहीं होता वह सदैव अपने रूप में बने रहते हैं। तो बेटा! देखो आज का विचार विनिमय क्या वह परमपिता परमात्मा से प्रार्थना करते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करें।

इन्द्र की प्रतिभा

एक सत्रह गऊओं को वृषभ कहता है–हे सत्यकाम ! हम एक सत्रह हो गये हैं और तुम गुरु के आश्रम को चलो। मानो उन्होंने दो कलाओं का ज्ञान बेटा! कराया। इससे पूर्वकाल में मैं तुम्हें प्राचीदिक कला का वर्णन कर रहा था। आज बेटा ! मैं देखो दक्षिण कला का वर्णन कर रहा था। जो मानो देखो जिसको हमारे यहाँ इन्द्रम् देखो दक्षिणाम् भूतम् ब्रह्मे वर्णम् अक्रतम देखो व्रताः। जैसे मुनिवरों ! देखो वेद का उद्गीत गाता हुआ कहता है, अग्नि जेष्ठ वरणं बेटा! देखो दक्षिण कहते हैं जहाँ इन्द्र की प्रतिभा का जन्म होता है। बेटा ! देखो दक्षिण में वह इन्द्र रहता है। वहाँ इन्द्र नाम बेटा! जहाँ आत्मा को कहा जाता है, वहाँ राजा का नाम भी इन्द्र है। वहीं बेटा! **देखो इन्द्र नाम वायु का है और शचि नाम विद्युत का है।** जब बेटा! देखो इन्द्र और विद्युत दोनों एक तुल्य बन जाते हैं, एक समूह बन जाते हैं,

तो बेटा! वहाँ अमृतम देखो मेघों को छिन्न-भिन्न कर देते हैं। वह जो वक्रासुर इन्द्र दोनों का संग्राम होता है और संग्राम हो करके बेटा! धीमी-धीमी वृष्टि प्रारम्भ हो जाती है। वह पृथ्वी के गर्भ में जब वह वृष्टि जाती है, तो नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देती है, वह नाना प्रकार के व्यंजनों वाली बनती है। तो मुनिवरों! देखो वह दक्षिणीदिग वरुणो, वह दक्षिणीदिग कहलाता है। जहाँ बेटा! देखो वह ब्रह्म ब्रह्मा वर्णतम् गौ के बछड़े जिसे वृषभ कहा जाता है, वह पृथ्वी की चमड़ी को उधेड़ करके बेटा! उसके मांस में, उसके गर्भ में बीज की स्थापना करते हैं और स्थापना करके बेटा! यह पृथ्वी नाना प्रकार के खनिज पदार्थों को प्रदान कर देती है। यही तो बेटा! देखो खाद्यान्न प्रकृति कही जाती है। मानो देखो उसका स्वामी कौन है? वह इन्द्र है और इन्द्र मानो देखो इन्द्र नाम वायु का है और शचि नाम उनकी पत्नी वह इन्द्र ब्रह्मे बेटा! वह विद्युत है और विद्युत का और इन्द्र का जब समन्वय होता है, तो वह जो वक्रासुर है उसका विनाश होता है। **वक्रासुर मेघ मण्डलों को कहते हैं।** वह वृष्टि का स्वामी कहलाता है। इसी प्रकार बेटा ! देखो इन्द्र नाम यहाँ वायु को माना गया है, कही इन्द्र नाम बेटा! राजा का भी है, जो एक सौ एक अश्वमेघ याग करता है, वह बेटा! देखो इन्द्र बनता है। उसका संसार में कोई शत्रु नहीं होता। वह अपनी इन्द्रियों पर विजय प्राप्त करता है और विजय प्राप्त करके और वह एक अश्वमेघ याग, एक सौ एक अश्वमेघ याग का नाम ही बेटा! इन्द्र है। जहाँ-जहाँ देखो राजा बनते हैं, इन्द्र बनते हैं, देखो राजाओं के भी धिराज बनते हैं। इसी प्रकार मुनिवरों! देखो इन्द्र नाम परमात्मा का है और इन्द्र नाम आत्मा का है, जो शरीर में वास कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो इन्द्र कहते हैं जो स्थिर रहने वाला हो। इन्द्र कहते हैं जहाँ गति बनी रहे, शरीर में जब तक इन्द्र रहता है, जब तक गतिवान बना रहता है शरीर और इन्द्र के चले जाने के पश्चात बेटा! गति शून्य हो जाता है। तो इसी का अभिप्राय देखो इन्द्रो भव प्रमाणं ब्रह्मे क्रतम। हे इन्द्र तू हमारे जीवन का जीवन दाता है और परमपिता परमात्मा का वाची कहलाया गया है।

आओ मेरे प्यारे! मैं इस सम्बन्ध में विशेष विवेचना तुम्हें देने नहीं आया हूँ। केवल विचार विनिमय क्या मुनिवरों! इन्द्रो भव प्रमाणं, यह मानो देखो दक्षिणायन में रमण करने वाला इन्द्र है, जो विद्युत की शक्ति बेटा! देखो हिमालय से मिलान करके मानो छिन्न-भिन्न कर देती है और मेघ मण्डलों को मानो वृष्टि के रूप में परणित करने वाली है। तो बेटा! यह देवत्व हो रहा है, तो देवत्व के ऊपर हमें विचार विनिमय करते हुए इस संसार सागर से पार होने का प्रयास करना चाहिए। तो आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें क्या उद्गीत गाने चला हूँ। आज का विचार विनिमय यह कि हम परपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते हुए अपने मानवीयत्व को ऊँचा बनाते हुए बेटा! सागर से पार होने का प्रयास करें। मेरे प्यारे! देखो जानाति जननं ब्रह्मा ब्रह्म लोकाम्। **वेद की आख्यायिका कहती है कि जानने का नाम ज्ञान है और ज्ञान के उपयोग का नाम ही बेटा! देखो विज्ञान है और विज्ञान के और ज्ञान के दोनों का समन्वय करने का नाम आध्यात्मिक विज्ञान कहा जाता है।** मेरे प्यारे! देखो आध्यात्मिकवाद उसे कहते हैं जहाँ भौतिकवाद को जानता हुआ मानव, लोक-लोकान्तरों को जानता हुआ मानव जहाँ वह नाना प्रकार के यन्त्रों में रमण करने वाला हो। लोक-लोकान्तरों में जो यात्री बन जाए और यात्री बन जाने के पश्चात् नाना प्रकार के यन्त्रों का अमृत बन जाए। बेटा! जहाँ भौतिक विज्ञान का समापन होता है, वहाँ से ही मुनिवरो! देखो आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ हुआ करता है।

आज का विचार विनिमय यह कि हमें आध्यात्मिकवाद में परणित रहना चाहिए। वह ब्रह्म ज्ञान है। वह स्वर्ग और देखो मोक्ष की एक सूक्ष्म पगडंडी है जिसको प्राप्त करने के पश्चात बेटा! वह ब्रह्म में परणित हो करके देखो उत्तरायण में प्रवेश हो जाता है और अपने में, अपने को ब्रह्म में और ब्रह्म को अपने में स्वीकार करके बेटा! ब्रह्मवर्चोसी बन जाता है। यह है बेटा! आज का वाक् अब मुझे समय मिलेगा तो मैं शेष चर्चाएँ कल प्रगट करूँगा। आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन-पाठन।

दिनांक : 18 मार्च, 1992
स्थान : ग्राम लहोड्डा

॥ ओ३म् ॥

मोक्ष

जीते रहो !

देखो मुनिवरो ! आज हम तुम्हारे समक्ष पूर्व की भाँति कुछ मनोहर वेद-मन्त्रों का गुण-गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा कि आज हमने पूर्व से जिन वेद-मन्त्रों का पठन-पाठन किया। हमारे यहाँ परम्परा से ही उस मनोहर वेद-वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद वाणी में उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि वह परमपिता परमात्मा ज्ञान और विज्ञान में सदैव प्रतिष्ठित रहता है। जब मानव विज्ञान के युग में प्रवेश करता है तो वह उस प्रभु की कला कृति का विचार-विनिमय प्रारम्भ करने लगता है। वैदिक साहित्य में परमपिता परमात्मा को **विश्वकर्मा** कहा है। उसकी रचना मानव को दृष्टिपात आने लगती है। क्योंकि मानव के अन्तःकरण में ही नाना सँस्कार विराजमान हैं और उसी आधार पर यह मानव नाना रूपों में दृष्टिपात करता है। उस परमपिता परमात्मा को वैदिक साहित्य में कहीं **वसुन्धरा** कहा है क्योंकि मानव इसी में वशीभूत रहता है। नाना प्रकार की आभा को प्राप्त करता हुआ, उसी के अन्तर्गत उसके गर्भ में परणित होता रहता है। क्योंकि यदि उसकी मूल चेतना समाप्त हो जाए तो मानव, मानव नहीं रहेगा, यह सँसार, सँसार नहीं रह पाता। ऐसा अनुपम जगत है कि उस अनुपम जगत के लिये मानव अपने जीवन को बहुत ऊर्ध्व में ले जाना चाहता है। वह ऊर्ध्वत्व को प्राप्त नहीं हो पाता। परन्तु जब हम गम्भीरता से विचार-विनिमय प्रारम्भ करते हैं तो वह देव भी वसुन्धरा बन करके इस सँसार को धारण कर रहा है।

हे प्रभु ! तू कैसा विश्वकर्मा है? आपकी कैसी अनुपमता है? मानव जब तेरे विषय में विचारने लगता है तो मौन हो जाता है, दार्शनिक मुग्ध

हो जाता है, वैज्ञानिक परमाणुओं में ओत-प्रोत हो करके वह मौन हो जाता है। हे देव! तू कैसा विचित्र है, तेरी कैसी विचित्र रचना है जो मानव जान नहीं पाता। जब मानव तेरे वशीभूत, तेरी महती में परणित हो जाता है वह सँसार को आभा में इसको उच्चारण करने में असमर्थ हो जाता है। मेरे प्यारे ! राज ऋषियों ने नाना प्रकार की वार्ताएँ प्रकट की हैं, नाना प्रकार का अनुसंधान किया।

आज मैं तुम्हें नाना ऋषियों की विज्ञानशाला में अथवा नाना दार्शनिकों में तुम्हें ले जाना चाहूँगा। जहाँ मानव नाना प्रकार का विचार-विनिमय करता रहा है। नाना प्रकार की अनुसंधानशालाएँ, नाना प्रकार की विज्ञानशालाएँ, शालाओं में रमण करने वाला प्राणी अपने को ऊर्ध्व में ले जाना चाहता है। परन्तु हमने इससे पूर्व काल में प्रकट करते हुए कहा कि यह जो परमात्मा का अनुपम क्षेत्र है इसमें नाना प्रकार की उड़ान उड़ी जाती है। नाना प्रकार के उड़ान उड़ने वाले हुए हैं जिनकी उड़ान बहुत ही विचित्र रही है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जिस काल में महर्षि भृगु जी साम-गान गाते रहते थे। ऋग् का साम से मिलान करते रहते थे। ऋग् का साम से मिलाप होता है तो मानव के जीवन की सन्धिपात हो जाती है। जैसे रात्रि और दिवस दोनों के मिलान का नाम सन्धि कहा जाता है। जिस प्रकार वही सन्धि जब साम-गान गाता है, सामवेद का मिलान कर लेता है जैसे मानव वेद के मन्त्र का उच्चारण करता है, इस वेद का ज्ञाता है।

ओ३म् रूपी सूत्र

ओम् प्रथम आता है। यह जो ओ३म् है यह कैसा अनुपम है? जैसे माला में धागा होता है अथवा सूत्र होता है इस सूत्र में प्रत्येक मनका पिरोया हुआ है, मनके पिरोने के पश्चात् यह माला बन जाती है। इसी प्रकार प्रत्येक वेद की ऋचा उस ओम् रूपी धागे में पिरोई हुई है। यदि हम ओम् रूपी धागे को वेद की ऋचा में से प्रथक कर देते हैं तो उसका जो विज्ञान है वह एक सूत्र में नहीं रह सकता। मुनिवरो ! विज्ञान को भी सूत्र में लाना है और विज्ञान का सूत्र क्या है? मैंने बहुत

पुरातन काल में वाक्य प्रकट करते हुए कहा था कि यह जो 'ओम्' रूपी धागा है, सूत्र है इसमें प्रत्येक वेद की ऋचा पिरोई हुई है।

वेद-मन्त्र के दो अर्थ

एक वेद का मन्त्र है उसका दो प्रकार का अर्थ माना जाता है- एक को हमारे यहाँ रूढ़ि कहते हैं और द्वितीय को यौगिक कहते हैं। रूढ़ि उसे कहते हैं जिसमें मानवीय साधारण पद्धति होता है। मानव का विचार, मानव का रहन-सहन, मानव की प्रतिभा उसको रूढ़ि कहते हैं। वेद से उसका सम्बन्ध रहता है। परन्तु यौगिक उसे कहा जाता है जहाँ प्राणत्व की क्रिया क्या है? मनस्तव की क्या है? यह मन क्या कार्य करता है? और प्राण क्या कार्य करता है? मेरे प्यारे! प्राण चित्र बन जाता है। जैसे रूढ़ि में 'ओ३म्' को हम एक चित्र बना लेते हैं, जब यौगिक क्षेत्र में जाएँगे तो प्राण को मानो उसी प्रकार का सूत्र स्वीकार कर लेंगे।

मनस्तत्त्व

यह जो मनस्तत्त्व है जिसको मन कहते हैं यह मन कैसा विचित्र है कि सँसार का विभाजन करता रहता है। जितना भी विभाजनवाद तुम्हें दृष्टिपात हो रहा है, यह लोक-लोकान्तरों के रूप में क्यों न हो, पृथ्वी के गर्भ में रसों के रूप में क्यों न हो, माता के गर्भस्थल में बेटा ! पुत्र पुत्री के रूप में क्यों न हो, यह विभाजन मनस्तत्त्व किया करता है। इसको मन ही कहा जाता है। प्राण के द्वारा इसका विभाजन होता रहता है। प्राण नाना रूपों में विराजमान रहता है।

प्राण के स्वरूप

मैंने बहुत पुरातन काल में ऋषि-मुनियों की सभा में इन वाक्यों को स्मरण किया था। एक समय महर्षि सोमभानु मुनि महाराज के यहाँ एक दार्शनिकों का एक समूह विराजमान था। उन ब्रह्मवेत्ताओं में यह चर्चा होने लगी थी कि मोक्ष किसे कहा जाता है? हम मोक्ष को जानना चाहते हैं। **महर्षि भृगु** ने इस सम्बन्ध में नाना प्रकार की अपनी चर्चाएँ

प्रकट की। परन्तु उन्होंने मोक्ष का जो मूल कारण माना है वह मनस्तव और प्राणत्तव को एक सूत्र में लाने का माना है। अब ये सूत्र में कैसे आएँगे। **"मन और प्राण को एक सूत्र में लाने का नाम मोक्ष कहा जाता है।"**

आज मैं इन विचारों को गम्भीर नहीं बनाऊँगा। यह गम्भीर विचार बनता चला जा रहा है। क्योंकि वेद का ऋषि ऐसी ही आज्ञा दे रहा है। वेद का मन्त्र आ रहा है "प्राणत्व मनस्तव इन्द्रताः मेधा ऋषितम् मेघाम् मोह रति वेदा।" मेरे प्यारे! मानव का सबसे प्रथम विभाजन होता है। सबसे प्रथम इसका विभाजन **जब यह मानव इस सँसार में आता है तो नाना प्रकार की इन्द्रियों के द्वारा इसका विभाजन हो जाना प्रारम्भ हो जाता है।** उस प्राण से मानो मनस्तव और प्राणत्तव दोनों पृथक हो जाते हैं। जब यह पृथक होते हैं तो प्राण का विभाजन होना प्रारम्भ हो जाता है। प्राण इस शरीर में पाँच रूपों में विराजमान होता है। (1) प्राण, (2) अपान, (3) उदान, (4) समान और (5) व्यान-ये पाँच प्राण कहलाए जाते हैं। ये पाँच प्राण इस मानव शरीर में अपना कार्य करने लगते हैं। क्योंकि **जो मन है यह ज्ञान का माध्यम है, ज्ञान का प्रतिनिधि माना गया है।** ज्ञान के माध्यम से इस मन को सर्वत्र कार्य प्रदान कर देता है। (1) **प्राण** नाभि केन्द्र से चलता है, यह नाना प्रकार की ज्ञान वाहक नाड़ियों में से रमण करता हुआ बाह्य-जगत में चला जाता है और बाह्य-जगत में करोड़ों खरबों परमाणु ले करके आन्तरिक-जगत में आ जाता है, यह तो प्राण का कार्य है।

मेरे पुत्रों ! (2) **अपान** है नाभि केन्द्र से निचले विभाग में अपान माना गया है। यह जो अपान है इसमें गुरुत्व है, इसमें आकर्षण शक्ति है। वेद का ऋषि तो यह कहता है कि यदि इस पृथ्वी में अपान शक्ति नहीं होगी तो सर्व पृथ्वियाँ सूर्य की किरणों के साथ सूर्य में आकर्षित हो जाएँगी। परन्तु यहाँ वेद का ऋषि कहता है, वैज्ञानिक रूपों से वर्णन करता हुआ कहता है कि इसमें गुरुत्व है। इसमें आकर्षण शक्ति है और देखो आकर्षण शक्ति अपान से मानी जाती है : अपान ही है जो मानव

को दूर ले जाता है। मानव को गमन कराता है, अपान ही है जो मानव के जीवन की सुरक्षा कर रहा है। यह (1) मन, (2) बुद्धि, (3) चित्त और (4) अहँकार जो अपने कारण में लय हो जाते हैं परन्तु प्राण ही जागरूक रहता है। एक अपान अपना कार्य कर रहा है। प्राण अपना कार्य कर रहा है। वहाँ मनस्तव भी नहीं रहता। परन्तु 'आत्मा रहि अस्ताः।' मैंने इससे पूर्व काल में निर्णय देते हुए कहा कि आत्मा का इसके साथ सन्निधान रहता है, सन्निधान मात्र से ही यह अपनी गति करता रहता है।

(1) प्राण, (2) अपान और (3) व्यान (4) उदान मानव के कँठ में रहता है। (3) **व्यान हम किसे कहते हैं?** हमारे इस मानव शरीर में 72 करोड़ 72 लाख 10 हजार दो सौ दो नाड़ियाँ गिनी जाती हैं। वह जो (1) व्यान प्राण गति कर रहा है प्रत्येक नस नाड़ी में वह इनको शक्ति प्रदान कर रहा है। उसको सँचालित कर रहा है, उनमें एक आभा उत्पन्न हो रही है। मेरे पुत्रों ! उस के पश्चात् (4) **समान** आता है, समान जितना भी रस बनाता है हमारे इस मानव शरीर में जठाराग्नि के उस रस को ले करके यह सर्व रस नाड़ियों में प्रदान कर देता है। सब नस नाड़ियों में प्रभा से गति होने लगती है, जहाँ जिसका योग होता है वहीं वह प्राप्त हो जाता है। इसके पश्चात् (5) **उदान** आता है। उदान का जो सम्बन्ध है वह कँठ से रहता है। जिस समय मानव इस शरीर को त्यागता है तो उदान के साथ में। उदान का सम्बन्ध मानो चित्त से होता है जिसे हम अन्तःकरण कहते हैं। जिस अन्तःकरण में करोड़ों जन्मों के सँस्कार निहित होते हैं-इसका नाम अन्तःकरण माना गया है। वह चित्त मिलान करता है प्राण से और इन दोनों का मिलान होता है आत्मा से, ये तीनों संगठित हो करके इस शरीर को त्याग देते हैं। जैसे उसी काल में सूक्ष्म शरीर होता है-सूक्ष्म शरीर को ले करके उदान प्राण इस शरीर को त्याग देता है। जब यह त्याग देता है तो इसके साथ में मानो एक धारा होती है। मानव को विचारना है कि जिस समय इस शरीर को त्यागा जाता है तो जितने विचार होते हैं अथवा मनस्तव, प्राणत्व में,

उदान में जो भी विचार होते है उसी के साथ में यह मानव शरीर की संज्ञा प्राप्त करता है। अथवा अन्य योनियाँ प्राप्त होती हैं। इसलिए वेद का ऋषि-एक वेद का मन्त्र कहता है ''अन्ताम् ब्रह्मो वृते देवा अस्वाः कृति वसन्डम् मानवाति कृति रूद्रो प्राणाः'' **वेद का ऋषि कहता है** कि हे मानव! जिस समय तू अपने शरीर को त्यागने लगे उससे पूर्व ही मानव तेरा अभ्यास ऐसा होना चाहिए । यदि स्वर्ग की कामना का तेरा अभ्यास होगा तो स्वर्ग में जाएगा यदि देवत्व का तेरा विचार होगा तू देवताओं के पास होगा। मेरे प्यारे! यदि मोक्ष का विचार बनेगा तो मोक्ष होगा।

यह दार्शनिक सभा में विचार-विनिमय होता रहा। आगे वेद का ऋषि कहता है कि ये पाँचों प्राण हैं, इन पाँचों प्राण के द्वारा मानव शरीर में गति करते रहते हैं। आज मैं सूक्ष्म शरीर की चर्चा करने नहीं आया। विचार-विनिमय केवल यह है कि जहाँ जैसा इस मानव का विचार है जिस विचार से उदान प्राण चित्त को ले करके आत्मा को शरीरों को धारण करता है उस तारतम्य शरीरों को त्यागता रहता है। वेद का ऋषि कहता है ''ब्रह्मवेत्ता हिरणयम् रूद्रो सुप्रजाः मन चक्रति रूद्रो वेदाः'' **मन की प्रवृत्ति के आधार पर इस मानव की प्रतिभा, मानव को देवत्व प्राप्त हो जाता है।**

आज वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कह रहा है ये जो मानव शरीर में पाँचो प्राण हैं जब मन इनको कार्य प्रदान कर देता है उसके पश्चात् (1) नाग, (2) देवदत्त, (3) धनञ्जय, (4) कूर्म और (5) कृकल। **ये पाँच प्राण सूक्ष्म प्राण होते हैं** अपना कार्य प्रारम्भ कर देते हैं। जिसको हम **नाग प्राण** कहते हैं। (1) नाग प्राण वह होता है जब मानव को कामना आती है, क्रोध की उत्पत्ति आती है, अति काम आता है उस समय वह जो नाग प्राण है वह ऊर्ध्व मुख हो जाता है और मानव का जैसे अमृत होता है वह नाग प्राण अपने में धारण करने लगता है, उसका हनन कर लेता है इसीलिए वेद के ऋषियो ने यह कहा है कि हे मानव ! तू क्रोध न कर, हे मानव तू अपने जीवन को अति कामनाओं के क्षेत्र में न ले जा अन्यथा यह जो नाग प्राण है यह तेरे सुकृत को

हनन करता हुआ अपने में धारण करता हुआ अमृत को निगलता हुआ विष को देता रहता है। वही विष इस मानव शरीर में नाना प्रकार के रोगों अथवा नाना प्रकार की भयँकर दैविक विपदाओं में उत्पन्न हो करके मानव को नाना प्रकार की आपत्तियाँ, नाना प्रकार के कष्ट धारण करने पड़ते हैं।

आगे (2) **देवदत्त प्राण** क्या करता है कि जितना भी सौन्दर्य है उसको अपने में धारण करता है, अपनें में समाहित कर लेता है और समाहित करके उसको चित्त में प्रदान कर देता है। उसमें एक प्रसारण शक्ति, उसमें एक रूप शक्ति कहलाई जाती है।

(3) **धनञ्जय** क्या करता है? यदि नाग अपना कार्य किसी कारण से त्याग देता है तो धनञ्जय अपना कार्य प्रारम्भ कर देता।

(4) **कूर्म** वह कहलाता है जिससे ब्रह्मवेत्ता की उत्पत्ति होती है, ब्रह्म में वह रमण करने लगता है। इसी प्रकारा देवदत्त, धनञ्जय, कूर्म और कृकल मानो ब्रह्मे मानो वह उद्बुध अग्नि को उत्पन्न करके वह द्यु-लोकों में ले जाता है। मानव को स्थूल बनाना, सूक्ष्म बनाना यह (4) कूर्म और (5) कृकल दोनों प्राणों का कार्य है। **यदि हम उदान प्राण से कूर्म और कृकल प्राण का मिलाप करना जानते हैं तो सूक्ष्म शरीर बन जाता है,** जितना सँकुचित अपने शरीर को हम बना लेते हैं। जैसा बेटा! तुमने स्मरण किया होगा कि त्रेता के काल में महाराजा हनुमान इस क्रिया को जानते थे। वह सुरसा के मुख में मुखारबिन्दु में परणित हो गए, अपने शरीर को इतना आँकुचन बना लिया। क्योंकि प्रकृति की पाँच प्रकार की गति मानी जाती। मानो (1) आँकुचन (2) प्रसारण (3) ऊर्ध्व क्रउत्क्षेपणमूञ्ज और (4) ध्रुवा क्रअवक्षेपणमूञ्ज और (5) गमनम् पाँच प्रकार की गति प्रकृति की है। इन पाँचों प्रकार की गतियों को जानने वाला योगेश्वर बेटा! अपने को स्थूल रूपों में ला सकता है और सूक्ष्म में आँकुचन के द्वारा बना सकता है। इसी प्रकार योगीजन इस महान् विज्ञान को जानते हैं। इस प्राण की क्रियाओं को जानते हैं। इसीलिये प्रत्येक मानव को प्राणायाम करना चाहिए। जो प्राणायाम करता है उस मानव का जीवन सुन्दर बनता रहता है।

प्राणायाम करने की क्रियाएँ

एक समय मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने यह वर्णन कराया कि तुम प्राणायाम करो। आसन तुम्हारा सुन्दर है। आसन पर विराजमान हो करके प्राणायाम करने की क्रियाएँ उन्होंने प्रकट कीं। उन क्रियाओं में जब अनुरत (लीन) हो गए तो कुम्भक जो प्राणायाम करते थे ऐसा प्रतीत होता था जैसे अन्तरिक्ष में रमण कर रहे हों। अन्तरिक्ष में हमारी सारे शरीर की गति उत्थान कर रही है। इसी प्रकार प्राणायाम करने से मानव के जीवन में एक महत्ता आती है और मानव के चित्त में जो सँस्कार होते हैं वे सँस्कार ऐसे जैसे मानो अन्न को हम अग्नि में तपा देते हैं उनमें उपज आदि नहीं रहती। इसी प्रकार जो रेचक कुम्भक प्राणायाम करता है, नाग, कूर्म और कृकल को मिलान करके प्राणों से मिलान करता है। मेरे प्यारे ! यह जो विचित्र अग्नि है 'प्राणा प्रभे' अणु जो अग्नि है उसमें मानव के सँस्कार निर्वीय हो जाते हैं, वह मानव का आवागमन वायु में से होने लगता है।

मेरे पुत्रों ! आज मैं विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूँ, विचार तुम्हें यह देने आया हूँ कि आज हमें प्राणत्व को विचारना चाहिए। यह प्राण क्या है? हमारे यहाँ कुछ क्रियाएँ ऐसी मानी जाती हैं। हमारे यहाँ चिकित्सा भी प्राणों के द्वारा होती है। **तीन प्रकार की चिकित्सा होती है**-एक औषधि के द्वारा, एक जल के द्वारा और एक प्राणों के द्वारा। ये तीन प्रकार की चिकित्सा हमारे यहाँ परम्परा से मानी जाती हैं। जितनी चिकित्सा हैं वह सब प्राण के अन्तर्गत आती हैं। क्योंकि औषधियों में प्राण शक्ति है। इसलिये वह जो चिकित्सा है वह प्राण के द्वारा ही मानो उद्‌बुध होती है, इसको प्राण में ही उद्‌बुध किया जाता है। जो प्राण को जानता है उन्हें यह जो जल की और औषध की प्रतिक्रिया है वे शान्त हो जाती हैं।

अब मेरे प्यारे पुत्रों ! मैं विचार देता हुआ दूर न चला जाऊँ। **विचार-विनिमय यह कि हम प्राण को अच्छी प्रकार जानने वाले बनें।** दार्शनिकों ने यह विचारा कि हमारे यहाँ मानव कितना व्यापक बन गया।

व्यापकता आ गई (1) नाग, (2) देवदत्त, (3) धनञ्जय, (4) कूर्म और (5) कृकल आदि प्राणों की उत्पत्ति हो गई। (1) प्राण, (2) अपान, (3) उदान, (4) समान और (5) व्यान हो गए। ये दस प्राण बन गए। दस प्राण बनने के पश्चात् बेटा ! मन की प्राप्ति हो गई। मन ने इन पाँचों प्राणों से मानव का यह ब्राह्य-जगत बन गया। इन्द्रियों के रूप में प्रकट हो गए। इन्द्रियों का कार्य मानों स्वतः प्रारम्भ हो गया। इन्द्रियों का अपना-अपना विषय प्रारम्भ हो गया। प्रत्येक देवता भी इन्द्रिय में विलीन हो गए। ये इन्द्रियाँ अपना कार्य करने लगीं। चक्षु सूर्य बनकर रहने लगा, घ्राण पृथ्वी बन करके रहने लगी, रसना चन्द्रमा बनकर रहने लगा एवं रस बन करके, इसी प्रकार मानव स्वरूप बन करके रहने लगा, त्वचा वायु बन करके रहने लगी। इसी प्रकार प्रत्येक इन्द्रिय अपने-अपने कार्य में रत्त होने लगी। उनका अपना एक देवता हो गया। उसी देवता में देवतत्व को प्राप्त होने लगे। **यह आन्तरिक-जगत बन गया।** आन्तरिक-जगत् से बाह्य-जगत बन गया। जब बाह्य जगत में इन्द्रियों को अपना कार्य परणित कर दिया, मन को प्राप्त कर दिया मानो मन के द्वारा इन्द्रियाँ अपना कार्य प्रारम्भ करने लगीं मानो प्राण का उपभोग हो गया क्योंकि प्राण का विभाजन हो गया।

तृष्णा

मेरे पुत्रों ! मानव के द्वारा अति कामना जब उत्पन्न होने लगी, अति द्रव्य की कामना आ गई और नाना प्रकार के देखो अवरोध आ गए। तो उसके पश्चात् मानव के द्वारा एक आँधि उत्पन्न हो गई। इसका नाम तृष्णा माना जाता है और तृष्णा की उत्पत्ति होते ही दो भाग उत्पन्न हुए। मान और अपमान के। मेरे प्यारे ! मान आता है तो वह भी मृत्यु का कार्य करता है। अपमान आने लगता है तो वह भी मृत्यु का कार्य है। अब मानव मृत्यु के मुखार्बिन्दु में परणित हो गया। मृत्यु ही मृत्यु दृष्टिपात होने लगी। आज्ञा के अनुसार कार्य होता है तो अभिमान की उत्पत्ति हो जाती है। आज्ञा के अनुसार नहीं होता तो निराशा मृत्यु का जन्म हो जाता है। मेरे प्यारे ! वही मृत्यु है जो मानव को सदैव दुःखित

करती रहती है। उसी के गृह में रमण करता रहता है कि मेरी मृत्यु न हो जाए, अमुक स्थान पर चला जाऊँ तो मेरी मृत्यु न हो जाए। मृत्यु के बिन्दु में रमण करता रहता है।

मेरे प्यारे ! देखो मान-अपमान उत्पन्न हो गए, अभिमान की उत्पत्ति हो गई, निराशा की उत्पत्ति हो गई, **अति कामना उत्पन्न होने का नाम तृष्णा कहलाता है।** अब ऋषि-मुनियों ने इसका बाह्य जगत् बना दिया। बाह्य जगत् में जहाँ भी दृष्टि जाती है मानव की वहीं अग्नि परीक्षा हो रही है। मेरी पुत्री दृष्टिपात आती है, पुत्र दृष्टिपात आता है, उनकी इच्छा की पूर्ति करने में मानव लगा रहता है। तो मेरे प्यारे ! अन्तिम परिणाम को विचारता है। शान्ति से तो उसका अन्तिम परिणाम कुछ दृष्टिपात नहीं आता। उसके पश्चात् मानव विचारता है अरे ! मुझे तो आत्म-कल्याण भी करना चाहिये। सँसार में, मेरा आत्म कल्याण कैसे होगा? तो मेरे पुत्रों ! कहा जाता है, वेद के दार्शनिक आचार्य कहते हैं कि ऋषियों ने विचारा कि सँसार को सँकुचित बनाओ। सबसे प्रथम ऋषियों ने यह विचारा कि तृष्णा को तुम वशीभूत करो। तृष्णा को जब अपने वशीभूत किया गया-अति कामनाओं का नाम ही तृष्णा माना जाता है। वैदिक आचार्यों ने इस तृष्णा को रक्त बीज कहा है। क्योंकि एक **रक्त बीज** से एक तृष्णा उत्पन्न हुई। एक पूर्ण होती है द्वितीय उत्पन्न है, द्वितीय पूर्ण हुई तृतीय उत्पन्न हो जाती है। यह कामनाओं का क्षेत्र बन जाता है। तृष्णा बलवती होती रहती है, वह इतनी स्थल को ग्रहण करने लगती है कि अन्त में मानव मौन हो जाता है और यह कहता है कि कहाँ जाऊँ?

मोक्ष का मार्ग

मुनिवरो ! उसके पश्चात् दार्शनिकों ने विचारा कि हमें मोक्ष को जाना है। यह सब इस शरीर का बाह्य-जगत् बना दिया। मानव का बाह्य-जगत् बन गया। अब वह इस सँसार को विचारता है और अब अपने जीवन को सँकुचित बनाता है। सबसे प्रथम वह कामना के क्षेत्र में जाता है। रक्त बीज को विजय करता है। रक्त बीज को कैसे विजय

करता है? वह गायत्री छन्दों का आश्रय लेता है। वह प्राणत्व का आश्रय ले करके सबसे प्रथम तृष्णा को विजय करता है। तृष्णा कैसे विजय की जाती है? **सबसे प्रथम मानव में ध्यान की धरणा होनी चाहिये।** धारणा में क्या किया जाता? वह धर्म है। **धर्म को हम धरणा कहते हैं।** धर्म क्या है? मौलिक जो रूप है उसको धारण करके धर्म ध्वनि को अपनाता है। धर्म-ध्वनि को अपना करके मनस्तव को प्राण के द्वारा मिलान करने का प्रयास करता है। जब वह मन और प्राण के द्वारा तृष्णा को विजय करता है तो उसके पश्चात् जो इन्द्रियों का विषय है, इन्द्रियों के जो देवता हैं उन देवताओं को एक सूत्र में लाने का प्रयास करता है। जैसे चक्षुओं का देवता सूर्य है और घ्राण का देवता पृथ्वी है इस रसना का देवता जल है और चन्द्रमा दो रस माने जाते हैं, देवता माने जाते हैं। इसी प्रकार श्रोत्रों का देवता दिशा है इन दिशाओं को अपने में धारण करता है, त्वचा का देवता वायु है, उपस्थ का देवता चन्द्रमा है और हस्तों का देवता भी दिशा मानी गई है। इन सब देवताओं को जानकर और देवताओं को एकत्रित करके, उनका समाज एकत्रित करके कहता है कि अब मैं अपने कल्याण में जाना चाहता हूँ।

मेरे प्यारे पुत्रों ! इन देवताओं को धारण करके जानता हुआ इनके दूत को जानने लगता है। वायु के क्षेत्र में जाता है तो वायु के साथ में गमन करता उड़ान उड़ने लगता है। अग्नि के द्वार पर जाता है तो अग्नि इसको समाप्त नहीं कर सकती। यदि वह चन्द्रमा के क्षेत्र मे जाता है तो इसको विभक्त नहीं कर सकता। इसी प्रकार इन्द्रियों के विषय को जान करके देवताओं को एकाग्र करके उसको प्राण रूपी सूत्र में पिरो देता है। (1) प्राण, (2) अपान्, (3) समान, (4) व्यान, (5) उदान, (6) नाग, (7) देवदत्त, (8) धनञ्जय, (9) कूर्म और (10) कृकल इन दसों प्राणों को एक सूत्र में लाता है। एक सूत्र में ला करके यह आत्मा इसके ऊपर विश्राम करता है। मनस्तव और प्राणत्व जो सँसार का विभाजन कर रहा था, जो मानव शरीर में विभक्त हो रहा था एक सूत्र में आ करके आत्मा उनके ऊपर विश्राम करके अब मन और प्राण दोनों को

एक सूत्र में लाने के पश्चात् आत्मा इसमें रत्त हो जाता है। गुणी कदापि भी पृथक् नहीं होता। उसको मोक्ष कहा जाता है।

मोक्ष किसे कहते हैं? मोक्ष उसे कहते हैं जहाँ मन और प्राण का विभाजन हो गया नाना रूपों में उसको एक सूत्र में लाना। एक ही आँगन में लाने का नाम मोक्ष कहा जाता है। आज मैं मोक्ष की उड़ान उड़ने लगा हूँ। विचार यह कि मानव का बाह्य-जगत जब लोगों में तत्वों पर विचार विनिमय प्रारम्भ करता है, इन पञ्च महाभूतों पर गति प्रारम्भ हो जाती है तो वैज्ञानिक बन जाता है। क्योंकि यह मन अणु परमाणुओं का विभाजन होता दृष्टिपात करता है। शब्द उच्चारण होता है वह अन्तरिक्ष में जाता है। अन्तरिक्ष में जिस मानव का शब्द है उसका चित्र दूसरे आँगन में गति कर रहा है। वह भी अन्तरिक्ष को जा रहा है। मानो देखो श्रोत्रों के द्वारा चित्रण हो रहा है।

आज का हमारा वैदिक ऋषि क्या कह रहा है? वेद का ऋषि कहता है कि **हे मानव ! तू प्राणायाम कर और प्राण की क्रिया को जान।** क्योंकि प्राण ही सँसार में गति कर रहा है। यह प्राण ही है जो पृथ्वी में नाना प्रकार की वनस्पतियों में जो भिन्न प्रकार का रसा-स्वादन हो रहा है। यह कौन है? यह प्राण का ही विभाजन होता है। मन इसको विभक्त करने वाला है। देखो एक साधारण मन कहलाता है और एक विश्वभान है। विश्वभान वह मन कहलाता है जिसके द्वारा सर्वत्र ब्रह्माण्ड विभक्त होता हुआ दृष्टिपात हो रहा है। नाना प्रकार का स्वादन, जलों का विभाजन होता हुआ माता पृथ्वी वसुन्धरा के गर्भ में जो नाना जलों का विभाजन हो रहा है, जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है वह मन और प्राण के द्वारा बनाया जा रहा है। इस माता वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकार का जो खनिज है उस खनिज में भी मन और प्राण ही गति कर रहा है। यह विश्वभान मन कहलाया जाता है। **मानव के शरीर में जो गति कर रहा है वह साधारण मन है।**

आज मैं ब्राह्य-जगत और अन्तरिक-जगत की तुलना करने लगा हूँ। बाह्य-जगत में जो क्रिया हो रही है। क्रीड़ा कर रहा है वही

आन्तरिक-जगत में हो रही है। तो इसलिए आज जब हम मोक्ष को जाना चाहते हैं, परमात्मा के आँगन में जाना चाहते हैं तो इन दोनों प्रकार के जगतों को जान करके मानव परमात्मा को प्राप्त हो जाता है। वही बेटा **उषरकेतु** कहलाया जाता है। आज विशेष व्याख्या देने नहीं आया हूँ विचार तुम्हें यह देने के लिये आया हूँ कि मानव को अपने जीवन को कितना गम्भीर बनाना है। कितना आश्चर्य चकित बनाना है। समय मिलेगा, इससे पूर्व की चर्चा में पितृ याज्ञों की चर्चा करूँगा।

प्राणायाम का क्रम

आज का विचार हमारा क्या कह रहा है कि हम परम पिता परमात्मा की आराधना करते हुए प्रत्येक मानव को प्राणायाम करना चाहिए और कैसे करना चाहिए? पूज्यपाद गुरुओं ने जो वर्णन कराया है कि आसन पवित्र हो, आसन कुशा का हो। जहाँ आसन हो वहाँ सुगन्धि पवित्र हो, आसन कुशा का हो। जहाँ आसन हो वहाँ सुगन्धि युक्त हो। उस काल में शनैः-शनैः मानव को प्राणायाम करना चाहिए सबसे प्रथम रेचक करना चाहिए। उसके पश्चात् कुम्भक करना चाहिए। कुम्भक के पश्चात् पूरक करना चाहिए। मानो शनैः-शनैः अपने प्राण को ऊर्ध्व में ले जाना शनैः-शनैः निचली स्थली में त्यागना। शनैः-शनैः उसको अपने में यथाशक्ति से कुम्भक कर लेना और रेचक कर लेना बाह्य त्याग करके रेचक में शान्त हो जाना। ऐसे प्राणायाम करते हुए मानव अपने प्राण की गति को ऊर्ध्व बनाने के लिए सदैव तत्पर रहना चाहिए। यह अभ्यास जब प्राणी को होता है वह अन्त में भी इसी विचार को ले करके जब मानव शरीर को त्यागता है तो प्राण के द्वारा इस शरीर को त्यागा जाता है तो मानव देव लोक को प्राप्त होता है। उसकी आत्मा देव लोक को प्राप्त होती है।

यह विषय इतने गम्भीर हैं इसको जानने के लिए मानव को तप की आवश्यकता है। ब्रह्मचरिश्यामि। कल मैं इसके सम्बन्ध में विशेष चर्चाएँ प्रकट करूँगा। आज का विचार-विनिमय क्या कि दार्शनिक समाज में यह विचार हो रहा था कि हम मोक्ष को जानना चाहते हैं।

मोक्ष की व्याख्या चाहते हैं। तो ऋषियों ने यह कहा है कि मोक्ष मन और प्राण को एक सूत्र में लाना। इसको बाह्य से जानते-जानते व्यापक रूप बनाते हुए आँकुचन करने का नाम मोक्ष कहलाया जाता है। आत्मा जब उनके ऊपर विश्राम करके जब गमन करता है तो वह मोक्ष की वृत्तियों को प्राप्त कर लेता है। इसीलिये वेद का ऋषि कहता है **"अन्तमथे सो मथा।"** कि अन्त में हमारा विचार मन्थनमय होगा वही तुम्हें प्राप्त होगा। मन और प्राण को एक सूत्र में लाना, आत्मा को विश्राम करना।

आगे ऋषि विशेष केतुक ऋषि ने कहा कि जब मन और प्राण और आत्मा ये तीनों संगठित हो जाते हैं तो उसके पश्चात् क्या गति बनती है। इसमें विशेष केतु ने यह कहा कि मेरे विचार में तो ऐसा आता है कि **जिस समय मन और प्राण एक सूत्र में आ जाते हैं तो उस अनुभव को मानव वर्णन करने में असमर्थ रहता है। उसका वर्णन नहीं किया जाता।** क्योंकि वह परमात्मा में अव्याहत गति से रमण करता है। उस अनुभव का वर्णन करना असमर्थ है। क्योंकि वाणी का विषय, इन्द्रियों का विषय वहाँ तक रहता है जहाँ तक एक दूसरे का मिलान नहीं होता और जब मिलान हो जाता है तो उस अनुभव को इन्द्रिय वर्णन नहीं कर सकती। इसमें नेति-नेति का प्रतिपादन किया जाता है।

यह है आज का वाक्य। अब मुझे समय मिलेगा तो शेष चर्चाएँ मैं कल प्रकट करूँगा। आज का यह वाक्य समाप्त अब वेद का पाठ होगा इसके पश्चात् वार्ता समाप्त हो जाएगी।

दिनांक : 2 मई 1976
समय : प्रातः 7 बजे।
स्थान : निर्मल वेदान्त सम्मेलन, अमृतसर

यौगिक प्रवचन माला भाग-9

॥ ओ३म् ॥

आशीर्वाद व शुभकामना

परमपिता परमात्मा की अनुपम कृपा से एवम् पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज के शुभ आशीर्वाद से श्री सेवा राम त्यागी जी व श्रीमति सुषमा देवी निवासी डी-111, सैक्टर नं. 23, संजय नगर, गाजियाबाद, उ.प्र. ने अपनी आयुष्मति सुपुत्री सुरेखा त्यागी का शुभ विवाह चिरंजीव सुमित त्यागी सुपुत्र श्री रविन्द्र कुमार त्यागी जी व श्रीमति कुसुम देवी निवासी ग्राम धनौरा, हापुड़, उ.प्र. के संग दिन शुक्रवार, 18 अप्रैल, 2014 को वैदिक विधि के साथ सर्वश्री डा. योगेश शास्त्री, आचार्य जयवीर शास्त्री तथा आचार्य राजेन्द्र शास्त्री जी के द्वारा वेद-मन्त्रों सहित सम्पन्न कराया और इस शुभावसर पर 500 रु. का सात्विक सहयोग समिति के प्रकाशन के कार्य के लिये प्रदान किया है जिसके लिए समिति हृदय से बारम्बार आभार प्रकट करती है।

आदरणीय श्री सेवाराम त्यागी जी अपने जीवन में बहुत ही वैदिक परम्परा के कर्त्तव्यपारायण व्यक्ति हैं और समाज के सभी कार्यों में सभी को अपना सहयोग पूर्ण उत्साह व सामर्थ्य के साथ देने में निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं। अपने परिवार को भी उस मार्ग पर ले जाते हुए प्रतिदिन दैनिक याग से सुगन्धित करते रहते हैं।

समिति नवदम्पत्ति व दोनों परिवारों की सुख, शान्ति, सर्वतोन्मुखी समृद्धि के लिए ईश्वर से प्रार्थना करती है।

वैदिक अनुसन्धान समिति (पञ्जी.)

योगनिष्ठ पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज
(शृङ्गी ऋषि जी) की अमृतवाणी संहिता के रूप में

1.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 1)	80.00
2.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 2)	50.00
3.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 3)	50.00
4.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 4)	50.00
5.	यौगिक प्रवचन माला (भाग 5)	50.00
6.	Yogic Wisdom of Ancient Rishis	50.00
7.	वेद पारायण-यज्ञ का विधि विधान	25.00
8.	आत्म-लोक	35.00
9.	धर्म का मर्म	30.00
10.	शंका-निवारण	30.00
11.	यज्ञ-प्रसाद अर्थात् यज्ञ का महत्व	40.00
12.	आत्मा व योग-साधना	35.00
13.	देवपूजा	20.00
14.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 1)	110.00
15.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 2)	110.00
16.	अतीत का दिग्दर्शन (भाग 3)	100.00
17.	रामायण के रहस्य	35.00
18.	यज्ञ एवं औषधि विज्ञान	40.00
19.	महाभारत के रहस्य	25.00
20.	अलङ्कार-व्याख्या	35.00
21.	रावण-इतिहास	40.00
22.	महाराजा-रघु का याग	25.00
23.	वनस्पति से दीर्घ-आयु	25.00
24.	मोक्ष प्राप्ति का मार्ग	30.00
25.	चित्त की वृत्तियों का निरोध	25.00
26.	आत्मा, प्राण और योग	35.00
27.	पञ्च-महायज्ञ	30.00
28.	अश्वमेघ-याग और चन्द्रसूक्त	30.00
29.	याग-मन्जूषा	25.00
30.	आत्म-दर्शन	25.00
31.	पुत्रेष्टि-याग और मातृ-दर्शन	25.00
32.	याग और तपस्या	45.00
33.	यागमयी-साधना	35.00
34.	यागमयी-सृष्टि	25.00
35.	याग-चयन	25.00
36.	दिव्य-रामकथा	110.00
37.	ज्ञान-कर्म-उपासना	25.00
38.	दिव्य-ज्ञान	35.00
39.	महाभारत एक दिव्य दृष्टि	80.00
40.	महर्षि-विश्वामित्र का धनुर्याग	25.00
41.	आत्म-उत्थान	30.00
42.	तप का महत्व	30.00
43.	अध्यात्मवाद	25.00
44.	ब्रह्मविज्ञान	35.00
45.	वैदिक-प्रभा	30.00
46.	प्रकाश की ओर	35.00
47.	कर्तव्य में राष्ट्र	35.00
48.	वैदिक-विज्ञान	35.00
49.	धर्म से जीवन	30.00
50.	आत्मा का भोजन	35.00
51.	साधना	30.00
52.	त्रेताकालीन-विज्ञान	40.00
53.	यज्ञोमयी-विष्णु	40.00
54.	यौगिक प्रवचन माला भाग-6	60.00
55.	स्वर्ग का मार्ग	40.00
56.	यौगिक प्रवचन माला भाग-7	60.00
57.	माता मदालसा	40.00
58.	यौगिक प्रवचन माला भाग-8	60.00
59.	यौगिक प्रवचन माला भाग-9	65.00
60.	यौगिक प्रवचन माला भाग-10	70.00
61.	याग एक सर्वाङ्ग पूजा	80.00
62.	यौगिक प्रवचन माला भाग-11	80.00
	पूज्यपाद ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज एवम्, कर्म भूमि लाक्षागृह	10.00

पुस्तक प्राप्ति के स्थान

योगनिष्ठ पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज की अमृतवाणी का साहित्य सँहिता, कैसेट्स, सी. डी. व डी. वी. डी. के रूप में निम्न स्थानों पर उपलब्ध है

1. श्री महानन्द संस्कृत महाविद्यालय, लाक्षागृह, बरनावा, जिला बागपत, (उ.प्र.)। दूरभाष : 01234 240395
2. श्री गुरुवचन शास्त्री, मकान नं. 165/30ए, दक्षिण भोपा रोड़, निकट माढ़ी की धर्मशाला, नई मण्डी, मुजफ्फरनगर (उ. प्र.)। दूरभाष : 0131 2606414
3. सुश्री. नीरू अबरोल, के-3 लाजपत नगर-3, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-41721294
4. डॉ. मधुसूदनेश्वर प्रकाश, A-59 पंचशील एन्क्लेव नई दिल्ली-110017 दूरभाष : 011-26498737
5. श्री अनिल त्यागी, सी-47 रामप्रस्थ, गाजियाबाद (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-4165802
6. श्री लोमश त्यागी, 106/4 पंचशील कालोनी गढ़ रोड़, मेरठ, (उ.प्र.) दूरभाष : 9410452076
7. डॉ. अशोक कुमार आर्य, आर्यावर्त कालोनी निकट मुरादाबादी गेट, अमरोहा, जिला-जे.पी. नगर (उ.प्र.) दूरभाष : 09412139333
8. श्री विवेक त्यागी, 16ए अशोक कॉलोनी, अल्कापुरी, हापुड, (उ.प्र.)। दूरभाष : 0122-2316196
9. श्री आशीष त्यागी, डी-293, रामप्रस्थ, पोस्ट ऑफिस चन्द्रनगर, गाजियाबाद पिन कोड-201011 (उ.प्र.)। दूरभाष : 0120-2642052
10. मैं. हर्ष मेडिकोज, ए-2/31, सैक्टर-110ए मार्किट नोएडा, फेस-2, (उ.प्र.) दूरभाष : 9899228860, 9871367937
11. श्री संजीव त्यागी, 1107, सैक्टर-3, बल्लभगढ़, फरीदाबाद हरियाणा। दूरभाष : 9910589486
12. श्री सुमन कुमार शर्मा, जे-380, सैक्टर बीटा-2, ग्रेटर नोएडा, (उ.प्र.) दूरभाष : 9313530505
13. श्रीमती बाला, 251, दिल्ली गेट, नई दिल्ली। दूरभाष : 011-23282088
14. श्री सतीश भारद्वाज, ग्राम बहेडी, रोहाना मिल, जिला मुजफ्फरनगर (उ.प्र.)।
15. मैं. विजय कुमार, गोविन्द राम हासानन्द, 4408, नई सड़क, दिल्ली। दूरभाष : 011-23977216
16. जवाहर बुक डिपो, बुढ़ाना गेट, आर्य समाज मेरठ शहर (उ.प्र.)।

मासिक सहयोग

श्री हरीराम गुप्ता, केसर स्टील, वजीरपुर, दिल्ली	1000 रुपये
श्री विवेक त्यागी, अल्कापुरी, हापुड़	1000 रुपये
श्री चिंतामणि त्यागी एवं श्री जगमोहन त्यागी बरला, मुजफ्फरनगर	1000 रुपये
श्री अरुण त्यागी, राजनगर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री संजीव त्यागी (दिनकरपुर) फरीदाबाद	500 रुपये
श्री विनोद त्यागी सुपुत्र श्री जयप्रकाश त्यागी मकनपुर, गाजियाबाद	500 रुपये
श्री वी.पी. सिंह, वसुंधरा, गाजियाबाद	250 रुपये
डॉ. शुचि, डॉ. राजीव, आणद, गुजरात	250 रुपये
श्रीमती शशि गुप्ता, नोएडा	125 रुपये
डॉ. ओ.पी. आर्य, आगरा	125 रुपये
श्री गुलजार सिंह, जगत पुरी, कृष्णा नगर, दिल्ली	100 रुपये
श्रीमती वीना त्यागी, अलीगढ़।	100 रुपये
मा. कार्तिक त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मा. लोमश त्यागी सुपौत्र श्री रामनिवास त्यागी ग्राम भंगेल, नोएडा	251 रुपये
मास्टर कवन्धि, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	101 रुपये
मास्टर सिद्धार्थ, अँकुर अपार्टमैन्ट, दिल्ली	101 रुपये

धन्यवाद

निम्न दानदाताओं ने समिति के प्रकाशन के कार्य को ऊर्ध्वा गति में निरन्तर सक्रिय बने रहने के क्रम में अपना सात्विक सहयोग प्रदान किया है—

1. श्रीमति रविला गुप्ता, गुलमोहर पार्क, नई दिल्ली	21000 रु.
2. श्री बृज खोसला, श्रीमति सुनिता खोसला, ग्रीन पार्क विस्तार, नई दिल्ली	5100 रु.
3. श्रीमति लीला वोहरा, लाजपत नगर, नई दिल्ली	11000 रु.
4. श्रीराम मूर्ति जी, मेरठ (500+1000)	1500 रु.
5. श्री गजराज सिंह, फफून्डा, मेरठ	1100 रु.
6. श्रीमति गरिमा त्यागी, रामप्रस्थ, गाजियाबाद	1100 रु.

समिति सभी का हृदय से बारम्बार आभार प्रकट करती है।

योगमुद्रा में प्रवचन करते हुए पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्णदत्त जी महाराज

उद्‌बोधन

बेटा ! मैं उच्चारण कर रहा था कि हम अपने जीवन को यज्ञमय बनाएँ हमारा जीवन परमात्मा ने रचा है, वह दान द्वारा, त्याग और तपस्या द्वारा, यज्ञ कर्म करने के लिए रचा है। अन्यथा इसके रचने का कोई उद्देश्य नहीं। क्योंकि जितने शुभ कर्म मानव शरीर से किये जाते हैं वे और शरीरों से नहीं किये जाते। जब नहीं किये जाते तो भी धर्म करता है वह सब यज्ञ कर्म कहलाता है। परन्तु जहाँ जितने परोपकार के यज्ञ, राष्ट्रीय यज्ञ, सर्वज्ञ यज्ञ होते हैं इन सब यज्ञों में निष्काम यज्ञ श्रेष्ठ होता है। जिसमें कोई कामना न हो, धारणा न हो वह यज्ञ देवताओं के निमित्त किया जाता है। वह अपना एक उद्देश्य और कर्त्तव्य होता है। कर्त्तव्य को लेकर के जो कार्य किया जाता है तो बेटा ! वह यज्ञ कर्म सर्वश्रेष्ठ कहलाता है।

पूज्यपाद गुरुदेव

वर्ष 42 : अंक : 501
जून 2014

मूल्यः
दस रुपये

प्रकाशक, मुद्रक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश (प्रकाशन मंत्री वै.अ.स.) द्वारा वैदिक
अनुसंधान समिति पंजी०
के लिए नवप्रभात प्रिटिंग प्रैस, दिल्ली से छपवाकर सी-38,
शिवालिक मालवीय नगर, नई दिल्ली-17 से प्रकाशित।
(अवै०) सम्पादक : डा० मधुसूदनेश्वर प्रकाश, दूरभाष : 26498737

POSTED AT N.D.PS.O ON 10/11-06-2014
Published on 5th day of the same month